# कल्याण

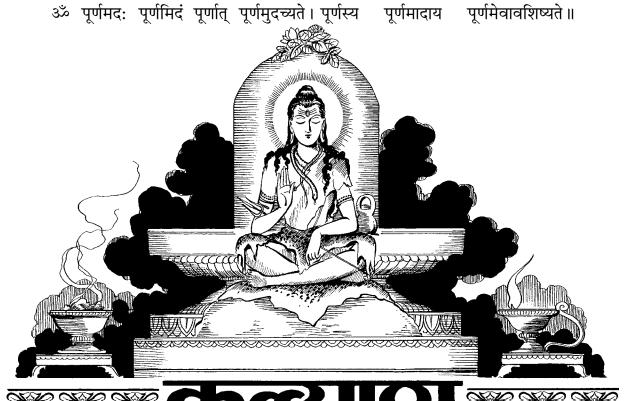
मूल्य १० रुपये



मकरी-उद्धार



गो-गोपी-गोपाल



वन्दे वन्दनतुष्टमानसमितप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्येकवासं शिवम्। सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मनुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम्॥

सत्य सत्यमय त्रिसत्यावभव सत्याप्रय सत्यद विष्णुब्रह्मनुत स्वकायकृपयापात्ताकृति शङ्करम्।

गोरखपुर, सौर ज्येष्ठ, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, मई २०१७ ई०

पूर्ण संख्या १०८६

'माधुरी मुरली अधर धरें'

मुरली अधर धरें।

माधुरी

बैठे मदनगुपाल मनोहर सुंदर कदँब तरैं॥ इत-उत अमित ब्रज-वधू ठाढ़ीं, बिबिध बिनोद करैं।

गाय-मयूर, मधुप रस-माते, नहीं समाधि टरै॥ झाँकी अति बाँकी ब्रज-सुत की, कलुष-कलेस हरै।

\_\_\_\_\_\_ बसत नयन-मन नित्य निरंतर, नव-नव रित सँचरे॥ \_\_\_\_\_\_ अर्थात् मदनमोहन भगवान् श्रीकृष्ण मनोहर गोपाल-वेशमें एक सुन्दर कदम्बवृक्षके नीचे [रत्नवेदिकायुक्त

सुवर्ण-सिंहासनपर] आसीन हैं। उनके अधरोंपर मुरली सुशोभित हो रही है और वे उसे मधुर स्वरमें बजा रहे हैं। उनके इधर-उधर बहुत-सी व्रजवधुएँ खड़ी हैं और अनेक प्रकारके विनोद कर रही हैं। गौएँ, मयूरगण और

भ्रमर [मुरली-ध्वनिसे उत्पन्न संगीतरूपी] रसका पानकर मतवाले होकर समाधि-अवस्थामें पहुँच गये हैं और उनकी समाधि किसी प्रकार टूट नहीं रही है। ब्रजराजकुँवरकी यह बाँकी झाँकी पाप और क्लेशको हरनेवाली

है। जिसके अन्तः चक्षुओंमें यह नित्य-निरन्तर बसी रहती है, उसके अन्तः करणमें उन गोपाल कृष्णके प्रति नव-नवायमान प्रेम संचरित होता रहता है। [पद-रत्नाकर]

कल्याण, सौर ज्येष्ठ, वि० सं० २०७४,	श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, मई २०१७ ई०
 विषय-	
विषय पृष्ठ-संख्या	विषय पृष्ठ-संख्या
१- 'माधुरी मुरली अधर धरें'	१५- सीता-स्वयंवर [राम-कथा] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') २ १६- 'राम राम जिपये' [किवता] (श्रीओमप्रकाशजी अग्निहोत्री 'सुबोध')
(श्रीसुरेशजी शुक्ल 'मृदुल')२७	२८- मनन करने योग्य
<del></del>	<b>99</b>
१ - मकरी-उद्धार	७- ओंकारेश्वर मन्दिर(इकरंगा) ३ ८- श्रीकेदारेश्वर मन्दिर( '' ) 3 ९- श्रीकेदारेश्वर ज्योतिर्लिंग, श्रीकेदारनाथ धाम( '' ) 3 १०- श्रीराम-लक्ष्मण और जानकीजीकी
	। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय।	जय हर अखिलात्मन् जय जय॥ । गौरीपति जय रमापते॥ 50 (₹3000) (Us Cheque Collection सजिल्द ₹११००
संस्थापक— <b>ब्रह्मलीन परम श्रद्ध</b> आदिसम्पादक— <b>नित्यलीलालीन १</b> सम्पादक— <b>राधेश्याम खेमका,</b> सहस् केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के	भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार मम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़
	an@gitapress.org 09235400242/244

संख्या ५ ] कल्याण याद रखों—मैं भगवान्की कृपाशक्तिपर विश्वास तुम्हारे लिये वस्तुतः भगवान्की कृपाशक्तिका कार्य करके जिस साधन-मार्गपर चल रहा हूँ, मेरे लिये वही रुका रहता है। कृपाशक्ति चाहती है-पूर्ण निर्भरता, प्रशस्त है और मैं उसमें निश्चय ही सफलता प्राप्त पूर्ण प्रपत्ति और पूर्ण आत्मनिवेदन। अपनेको अपनी करूँगा। ऐसा कभी मत सोचो कि साधन ठीक है या सारी शक्तियोंसहित सारी शक्तियोंके उद्गम और आकर-नहीं, अथवा सफलता मिलेगी या नहीं। सन्देह मार्गमें स्वरूप भगवानुके समर्पण कर दो। अपने समस्त रोक देता है और विश्वास लक्ष्यपर पहुँचा देता है। अहंकारको जला दो, गलाकर बहा दो और सर्वतोभावसे *विश्वास करो और निश्चय करो*—मैं इस बार कुपा माताका आश्रय ग्रहण करो। फिर देखोगे, कितनी मानव-शरीर धारण करके जगतुमें आया ही इसलिये हँ जल्दी और कितनी सुकरता एवं सुन्दरतासे तुम्हारी यह कि अबकी बार मैं शरीरके बन्धनसे, जो अज्ञानजनित है, आखिरी जीवनयात्रा सफल होती है। छुटकर ही रहँगा। अज्ञानके कारण ही मैं अनादि कालसे याद रखो-भगवत्कृपा तुम्हें अपनाने, तुमपर अबतक भटकता रहा। अब नहीं भटकूँगा, नहीं भटकूँगा। बरसने, तुम्हें अपनी महान् मधुर और शीतल छायाका याद रखो — अज्ञानका सर्वथा समूल नाश होना आश्रय देनेके लिये सदा-सर्वदा तैयार है तथा वह यह और भगवत्तत्त्वका साक्षात्कार होना एक ही बात है, भी नहीं देखती कि तुम्हारा पूर्व इतिहास—अबतकका यह भगवतत्त्व-साक्षात्कार ही मानव-जीवनका चरम आचरण कैसा है। तुम पुण्यात्मा हो या पापी, तुम सात्त्विक हो या तामस, तुम ब्राह्मण हो या चाण्डाल, एवं परम लक्ष्य है, और यह निश्चय करो कि मैं उस भगवत्तत्त्व-साक्षात्कारका सर्वथा अधिकारी होकर ही तुम देवता हो या दानव, तुम हिन्दू हो या मुसलमान, आया हूँ तथा उसे प्राप्त करके ही रहूँगा। तुम धनी हो या गरीब और तुम पण्डित हो या मुर्ख— याद रखो-मेरे इस अधिकारका एकमात्र बल वह तो केवल देखती है तुम्हारे अन्दरका भाव। यदि तुम सचमुच अन्य सारे साधनोंसे हताश-निराश होकर है भगवानुकी कुपा और वह भगवानुकी कुपा मुझे अनन्त और असीम रूपमें प्राप्त है। मैं उस कृपासमुद्रमें और एक विश्वास-भरोसेके साथ उसकी ओर निहार निमग्न हूँ। इसलिये अब मुझे यह भी सोचना नहीं है रहे होगे तो वह उसी क्षण तुम्हें अपना लेगी, तुमपर कि भगवत्तत्त्वका साक्षात्कार भी मुझे करना है; क्योंकि चारों ओरसे बरस पड़ेगी और तुम्हें अपनी सुखद भगवत्कुपाके अथाह समुद्रमें निमग्न हो जानेके बाद न छायाका आश्रय देकर निश्चिन्त, निर्भय और निष्काम तो कोई सोच-विचार होता है और न उसकी आवश्यकता बना देगी। तुम्हारी कोई भी कामना अपूर्ण नहीं रहेगी ही रहती है। उस समय; परंतु तुम्हें कामना और उसकी पूर्तिका भी याद रखो—भगवान्की कृपाशक्ति समस्त भागवती पता नहीं रहेगा। तुम उस समय उस कृपाशक्तिकी शक्तियोंकी स्वामिनी हैं। सारी शक्तियाँ इन्हींकी अनुगता पवित्र लहरोंके साथ घुल-मिलकर स्वयं पवित्र-कृतार्थरूप हो जाओगे।

होकर कार्य करती हैं। यह महती कृपाशक्ति जिसको अपना लेती है, वह भगवत्तत्त्व-साक्षात्कार ही क्या

भगवान्को—समग्ररूपसे—सब प्रकारसे पाकर निहाल हो जाता है।

याद रखो - जहाँतक अपने पुरुषार्थ तथा अपनी पृथक् क्षुद्र शक्तिपर आस्था है तबतक एक तुच्छ

अहंकारका तुमपर आधिपत्य है। ऐसे अहंकारके रहते

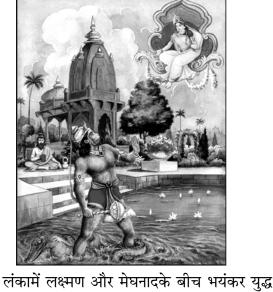
खोजते हो और इसीसे उस नित्यप्राप्त जन्मसिद्ध अपने परम धनसे वंचित हो रहे हो!

'शिव'

विश्वास करो-भगवान्की कृपा तुमपर है ही।

वह सदा सभीपर है। सभीको प्राप्त है। तुम विश्वास

नहीं करते—मानते नहीं, इसीसे अन्य साधनोंका सहारा



हो रहा था। जब मेघनादने अपने प्राणोंपर संकट देखा तो उसने ब्रह्माजीकी दी हुई शक्तिका लक्ष्मणपर प्रहार किया। उससे घायल होकर लक्ष्मणजी मूर्च्छित हो गये। लक्ष्मणजीकी चिकित्साके लिये हनुमान्जी लंकासे सुषेण वैद्यको सोते हुए ही घरसहित उठा लाये। सुषेणने कहा, 'हिमालयके

आँखोंसे हन्मान्जीकी ओर देखा। वे तुरन्त ही द्रोणाचल जानेके लिये तैयार हो गये। रावणने सोचा कि किसी प्रकार हनुमान्की यात्रामें विघ्न डाला जाय, जिससे वे औषधि लेकर समयसे न लौट सकें। वह कालनेमि राक्षसके पास गया तथा उससे कहा, 'तुम ऐसी माया रचो कि लक्ष्मणके

प्राण बचानेके लिये औषधि लेकर हनुमान् समयसे लौट न

सकें।' रावणकी बातें सुनकर कालनेमिने कहा, 'नाथ!

सुबह होनेके पहले ही ले आना चाहिये। तभी इनके प्राण

बच सकते हैं।' वैद्य सुषेणकी बातें सुनकर सबने आशाभरी

रामके दूत हनुमान्को मायासे मोहित कर पानेमें कोई भी समर्थ नहीं है। मैं ऐसा प्रयत्न करूँगा तो मुझे निश्चित रूपसे मृत्युके मुँहमें जाना होगा।' कालनेमिकी बातें सुनकर रावण बहुत ही क्रोधित हो उठा। उसने कहा 'कालनेमि!

यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो तुम्हें मेरे ही हाथसे मरना होगा।' कालनेमिने सोचा कि जब मरना ही है तो मैं इस मारा जाऊँ ? यह सोचकर उसने उनके मार्गमें एक बहुत

ही सुन्दर आश्रमका निर्माण किया। स्वयं मुनिका वेश बनाकर उस आश्रममें बैठ गया। हनुमान्जी जब उस आश्रमके पास पहुँचे तब उन्हें बडे जोरोंकी प्यास लगी। वे शीघ्र ही कपटी मुनि कालनेमिके आश्रममें जा पहुँचे।

उसको प्रणाम करके कहा, 'मुनिवर! मुझे बड़े जोरकी प्यास लगी है, यहाँ जल कहाँ मिल सकेगा?' कपटी कालनेमिने कहा, 'रावण और राममें महान्

युद्ध हो रहा है। रामजी जीतेंगे इसमें सन्देह नहीं है। हे भाई! मैं यहाँ रहता हुआ ही सब देख रहा हूँ। मुझे ज्ञानदृष्टिका बहुत बड़ा बल है। मेरे इस कमण्डलुमें शीतल जल भरा हुआ है। तुम इसे पीकर प्यास बुझा लो।' हनुमान्जीने

कहा, 'थोड़े जलसे मेरी प्यास नहीं बुझेगी। आप मुझे कोई जलाशय बता दीजिये।' कालनेमिने उन्हें एक सुन्दर जलाशय दिखाते हुए कहा, 'तुम वहाँ जाकर अपनी प्यास

बुझा लो और स्नान भी कर लो। इसके बाद मैं तुम्हें दीक्षा दूँगा।' उसकी बातें सुनकर हनुमान्जी शीघ्र ही उस जलाशयके पास पहुँच गये। स्नान करनेके लिये ज्यों ही वे उस जलाशयके भीतर गये, त्यों ही एक मकरीने उनका पैर द्रोणाचल शिखरपर संजीवनी बूटी नामक औषधि है। उसे

> आकाशमें पहुँच गयी। उसने हनुमान्जीसे कहा, 'पवनपुत्र हनुमान् ! एक मुनिके शापके कारण मुझे मकरी बनना पड़ा था। हे रामदूत! तुम्हारे दर्शनसे आज मैं पवित्र हो गयी।

मुनिका शाप मिट गया। आश्रममें बैठा हुआ यह मुनि कपटी घोर निशाचर है।' उस अप्सराकी बात सुनकर महाबली हनुमान्जी तुरन्त ही उस कपटी मुनि कालनेमिके पास जा पहुँचे

पकड़ लिया। हनुमान्जीने तुरन्त ही उसका मुँह फाड़कर उसे मार डाला। हनुमान्जीद्वारा मारे जाते ही वह मकरी

दिव्य अप्सराका वेश धारण करके विमानमें बैठकर

और कहा, 'मुनिवर! आप पहले मुझसे गुरुदक्षिणा ले लीजिये। मन्त्र आप मुझे बादमें दीजियेगा।' यह कहकर उसको अपनी पूँछमें लपेट लिया और पटककर मार डाला। मरते समय कालनेमिने अपना असली राक्षसका

रूप प्रकट कर दिया। मुखसे राम-राम कहा। इस प्रकार दुष्टां ाषर्रागोक्षे तका ज्ञां बट चानवेद् के व्यापु का नामे तका का कि का कि संख्या ५ ] शिव-तत्त्व शिव-तत्त्व (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) [गतांक ४ पृ०-सं० ९ से आगे] 'शिव' शब्द नित्य, विज्ञानानन्दघन परमात्माका फल-पुष्पादिसे पूजित होकर उसके तपका उद्देश्य शिवसे विवाह करना है, यह जानकर कहने लगे— वाचक है। यह उच्चारणमें बहुत ही सरल, अत्यन्त मधुर और स्वाभाविक ही शान्तिप्रद है। 'शिव' शब्दकी 'हे देवि! इतनी देर बातचीत करनेसे तुमसे मेरी उत्पत्ति 'वश कान्तौ' धातुसे हुई है, जिसका तात्पर्य यह मित्रता हो गयी है। मित्रताके नाते मैं तुमसे कहता हूँ, है कि जिसको सब चाहते हैं, उसका नाम 'शिव' है। तुमने बड़ी भूल की है। तुम्हारा शिवके साथ विवाह सब चाहते हैं अखण्ड आनन्दको। अतएव 'शिव' करनेका संकल्प सर्वथा अनुचित है। तुम सोनेको शब्दका अर्थ आनन्द हुआ। जहाँ आनन्द है वहीं शान्ति छोड़कर काँच चाह रही हो, चन्दन त्यागकर कीचड़ है और परम आनन्दको ही परम मंगल और परम पोतना चाहती हो। हाथी छोड़कर बैलपर मन चलाती कल्याण कहते हैं, अतएव 'शिव' शब्दका अर्थ परम मंगल, हो। गंगाजलका परित्यागकर कुएँका जल पीनेकी इच्छा परम कल्याण समझना चाहिये। इस आनन्ददाता, परम करती हो। सूर्यका प्रकाश छोडकर खद्योतको और कल्याणरूप शिवको ही शंकर कहते हैं। 'शं' आनन्दको रेशमी वस्त्र त्यागकर चमडा पहनना चाहती हो। तुम्हारा यह कार्य तो देवताओंकी सिन्निधका त्यागकर असुरोंका कहते हैं और 'कर' से करनेवाला समझा जाता है, अतएव जो आनन्द करता है, वही 'शंकर' है। ये सब साथ करनेके समान है। उत्तमोत्तम देवोंको छोड़कर लक्षण उस नित्य, विज्ञानानन्दघन परम ब्रह्मके ही हैं। शंकरपर अनुराग करना सर्वथा लोकविरुद्ध है। इस प्रकार रहस्य समझकर शिवकी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक जरा सोचो तो सही, कहाँ तुम्हारा कुसुम-सुकुमार उपासना करनेसे उनकी कृपासे उनका तत्त्व समझमें आ शरीर और त्रिभुवनकमनीय सौन्दर्य और कहाँ जटाधारी, जाता है। जो पुरुष शिव-तत्त्वको जान लेता है, उसके चिताभस्मलेपनकारी, श्मशानविहारी, त्रिनेत्र, भूतपति लिये फिर कुछ भी जानना शेष नहीं रह जाता। शिव-महादेव! कहाँ तुम्हारे घरके देवतालोग और कहाँ शिवके पार्षद भूत-प्रेत! कहाँ तुम्हारे पिताके घरके तत्त्वको हिमालयतनया भगवती पार्वती यथार्थरूपसे जानती थीं, इसीलिये छद्मवेषी स्वयं शिवके बहकानेसे भी वे बजनेवाले सुन्दर बाजोंकी ध्वनि और कहाँ उस महादेवके अपने सिद्धान्तसे तिलमात्र भी नहीं टलीं। उमा-शिवका डमरू, सिंगी और गाल बजानेकी ध्वनि! न महादेवके माँ-बापका पता है, न जातिका! दरिद्रता इतनी कि यह संवाद बहुत ही उपदेशप्रद और रोचक है। शिवतत्त्वैकनिष्ठ पार्वती शिवप्राप्तिके लिये घोर तप पहननेको कपडातक नहीं है! दिगम्बर रहते हैं, बैलकी सवारी करते हैं और बाघका चमडा ओढे रहते हैं! न करने लगीं। माता मेनकाने स्नेहकातरा होकर उ (वत्से!) उनमें विद्या है और न शौचाचार ही है। सदा अकेले मा (ऐसा तप न करो) कहा, इससे उसका नाम 'उमा' हो गया। उन्होंने सूखे पत्ते भी खाने छोड़ दिये, तब रहनेवाले, उत्कट विरागी, मुण्डमालाधारी महादेवके उनका 'अपर्णा' नाम पड़ा। उनकी कठोर तपस्याको साथ रहकर तुम क्या सुख पाओगी?' देख-सुनकर परम आश्चर्यान्वित हो ऋषिगण भी कहने पार्वती और अधिक शिव-निन्दा न सह सर्कीं। वे लगे कि 'अहो, इसको धन्य है, इसकी तपस्याके सामने तमककर बोलीं—'बस, बस, बस रहने दो, मैं और अधिक सुनना नहीं चाहती। मालूम होता है, तुम शिवके दुसरोंकी तपस्या कुछ भी नहीं है।' पार्वतीकी इस तपस्याको सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते। इसीसे यों मिथ्या प्रलाप देखनेके लिये एक समय स्वयं भगवान् शिव जटाधारी वृद्ध ब्राह्मणके वेषमें तपोभूमिमें आये और पार्वतीके द्वारा कर रहे हो। तुम किसी धूर्त ब्रह्मचारीके रूपमें यहाँ आये

भाग ९१ \* वे वहाँसे जाने लगीं, वटुवेषधारी शंकरने उन्हें रोक लिया। हो। शिव वस्तुत: निर्गुण हैं, करुणावश ही वे सगुण होते हैं। उन सगुण और निर्गुण—उभयात्मक शिवकी जाति वे अधिक देरतक पार्वतीसे छिपे न रह सके, पार्वती जिस कहाँसे होगी? जो सबके आदि हैं, उनके माता-पिता रूपका ध्यान करती थीं, उसी रूपमें उनके सामने प्रकट हो गये और बोले—'मैं तुमपर प्रसन्न हूँ, वर माँगो।' कौन होंगे और उनकी उम्रका ही क्या परिमाण बाँधा जा सकता है? सृष्टि उनसे उत्पन्न होती है, अतएव पार्वतीकी इच्छा पूर्ण हुई, उन्हें साक्षात् शिवके दर्शन हुए। दर्शन ही नहीं, कुछ कालमें शिवने पार्वतीका उनकी शक्तिका पता कौन लगा सकता है ? वही अनादि, अनन्त, नित्य, निर्विकार, अज, अविनाशी, सर्वशक्तिमान्, पाणिग्रहण कर लिया। सर्वगुणाधार, सर्वज्ञ, सर्वोपरि, सनातनदेव हैं। तुम कहते जो पुरुष उन त्रिनेत्र, व्याघ्राम्बरधारी, सदाशिव हो, महादेव विद्याहीन हैं। अरे, ये सारी विद्याएँ आयीं परमात्माको निर्गुण, निराकार एवं सगुण, निराकार कहाँसे हैं ? वेद जिनके नि:श्वास हैं, उन्हें तुम विद्याहीन समझकर उनकी सगुण, साकार दिव्य मूर्तिकी उपासना कहते हो ? छि:! छि!! तुम मुझे शिवको छोड़कर किसी करता है, उसीकी उपासना सच्ची और सर्वांगपूर्ण है। अन्य देवताका वरण करनेको कहते हो। अरे, इन इस समग्रतामें जितना अंश कम होता है, उतनी ही देवताओंको जिन्हें तुम बड़ा समझते हो, देवत्व प्राप्त ही उपासनाकी सर्वांगपूर्णतामें कमी है और उतना ही वह कहाँसे हुआ ? यह उन भोलेनाथकी ही कृपाका तो फल शिव-तत्त्वसे अनिभज्ञ है। है। इन्द्रादि देवगण तो उनके दरवाजेपर ही स्तुति-प्रार्थना महेश्वरकी लीलाएँ अपरम्पार हैं। वे दया करके जिनको अपनी लीलाएँ और लीलाओंका रहस्य जनाते करते रहते हैं और बिना उनके गणोंकी आज्ञाके अन्दर घुसनेका साहस नहीं कर सकते। तुम उन्हें अमंगलवेष हैं, वही जान सकते हैं। उनकी कृपाके बिना तो उनकी कहते हो? अरे, उनका 'शिव'-यह मंगलमय नाम विचित्र लीलाओंको देख-सुनकर देवी, देवता एवं जिनके मुखमें निरन्तर रहता है, उनके दर्शनमात्रसे सारी मुनियोंको भी भ्रम हो जाया करता है, फिर साधारण अपवित्र वस्तुएँ भी पवित्र हो जाती हैं, फिर भला स्वयं लोगोंकी तो बात ही क्या है? परंतु वास्तवमें शिवजी उनकी तो बात ही क्या है? जिस चिताभस्मकी तुम महाराज हैं बड़े ही आशुतोष! उपासना करनेवालोंपर निन्दा करते हो, नृत्यके अन्तमें जब वह उनके अंगोंसे बहुत ही शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। रहस्यको जानकर झड़ती है, उस समय देवतागण उसे अपने मस्तकोंपर निष्काम-प्रेमभावसे भजनेवालोंपर प्रसन्न होते हैं, इसमें धारण करनेको लालायित होते हैं। बस, मैंने समझ तो कहना ही क्या है? सकामभावसे, अपना मतलब गाँठनेके लिये जो अज्ञानपूर्वक उपासना करते हैं, उनपर लिया, तुम उनके तत्त्वको बिलकुल नहीं जानते। जो मनुष्य इस प्रकार उनके दुर्गम तत्त्वको बिना जाने उनकी भी आप रीझ जाते हैं, भोले भण्डारी मुँहमाँगा वरदान देनेमें कुछ भी आगा-पीछा नहीं सोचते। जरा-सी भक्ति निन्दा करते हैं, उनके जन्म-जन्मान्तरोंके संचित किये हुए पुण्य विलीन हो जाते हैं। तुम-जैसे शिवनिन्दकका करनेवालेपर ही आपके हृदयका दयासमुद्र उमड़ पड़ता सत्कार करनेसे भी पाप लगता है। शिवनिन्दकको है। इस रहस्यको समझनेवाले आपको व्यंग्यसे 'भोलानाथ' देखकर भी मनुष्यको सचैल स्नान करना चाहिये, तभी कहा करते हैं। इस विषयमें गोसाईं तुलसीदासजी वह शुद्ध होता है। बस, अब मैं यहाँसे जाती हूँ। कहीं महाराजकी कल्पना बहुत ही सुन्दर है। वे कहते हैं-ऐसा न हो कि यह दुष्ट फिरसे शिवकी निन्दा प्रारम्भकर बावरो रावरो नाह भवानी। मेरे कानोंको अपवित्र करे। शिवकी निन्दा करनेवालेको दानि बड़ो दिन देत दये बिनु, बेद बड़ाई भानी॥ तो पाप लगता ही है, उसे सुननेवाला भी पापका भागी निज घरकी बरबात बिलोकहु, हौ तुम परम सयानी। होता है।' यह कहकर उमा वहाँसे चल दीं। ज्यों ही सिवकी दई संपदा देखत, श्री-सारदा सिहानी॥

जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुखर्जी नर्ही निम्हानी।  (२) भगवान् शिवमें प्रेम होनेके लिये उनकी तित रंकनकौ नाक सँबारत, हाँ आयो नककानी।  उप्रम-प्रसंसा-विनय-च्यान्त, सुन विधिकी वर बानी। तुलसी मृदित महेस मनिह मन, जगत-मातु सुसुकानी।  —ऐसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको जो प्रेमसे नहीं भजते, वासत्वमें वे शिवके तल्वको नहीं जानते, अतएक उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय पाठकगणी! आपलोगोंसे मेरा नम्न निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेप्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय है, शलीक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर—  (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तल्वको जानेवाल भक्तेंद्वा अंतर उनका अनुसार आवरण फरनेके लिये मान्व स्वा और उनके अनुसार आवरण करनेक लिये मान्व स्व और उनके अनुसार आवरण करनेक लिये मान्व स्व और उनके अनुसार आवरण करनेके लिये मान्व स्व और प्रमेस नित्य करना।  (३) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तल्वको जानेवाल भक्तेंद्वा अंतर उनका अनुसार आवरण करनेके लिये मान्व स्व व्यवह हो कर उपर्युक साधनोंको करनो चित्र मान्व शंकरके प्रमान् स्वर्ण करनेक लिये मान्व स्व अधिक करनेक अनुसार अवरण करनेक लिये मान्व (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रमान भावमें स्वर्ण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेक लिये मान्व स्व अधिकर उनके अनुसार आवरण करनेक लिये मान्व स्व अधिकर जोग्न प्रचान प्रमान करना।  (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये का निर्म करनी चाहिये। विद अनन्य संस्त बह्न है। अतएव माना प्रकारके करनेके विवये का समझकर है। अतएव माना प्रकारके करनेके विवये का समझकर है। अतएव माना प्रकारके करनेके का समझकर है। अतएव माना प्रकारके स्वर्ण करना चाहिये। विद अनन्य संस्त बह्न है। अत्र विन सिर्त करने भावान्त होवये। विद अनन्य (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम हैनके लिये आता हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं वाहिये। विद अनन्य सम्भ करना चाहिये। यदि अनन्य अनुत करना मानुक समझकर उनके स्वरूपक मान्व स्व व्यवहारकालमें— (४) अववहारकालमें— (१) स्वार्यके त्यानक रेममें किंते किंते मान्व सम्भ करना हुन होने लिये प्राणपर्य चेपा करनो। (४) अववहारकालमें— (१) स्वार्य करना। (३) अववहारकालम	संख्या ५ ] शिव-	-तत्त्व ९
तिन रंकनकौ चाक सँवारत, हाँ आयो नकबानी।  दुख-दीनता दुखी इनके दुख, जाचकता अकुलानी।  यह अधिकार साँपिये औरिंह, भीख भली मैं जानी।  प्रेम-प्रसंसा-विनय-व्यंगजुत, सुनि विधिकी वर वानी।  —ऐसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको जो प्रेम-से नहीं  —एसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको नहीं जानते, अतएव  उनमें पर-पप्पर भगवान् स्वारोक स्वारोक समझकर  अधारोक अनुसार अवारोक करमीं।  —एसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको न्वरंग अवारेव हैं। इससे अधिक  चारवान् शंकरको स्वरंग भगवान् श्वरंग स्वरंग अवारेव स्वरंग स्वर	<u> </u>	**********************************
दुख-दीनता दुखी इनके दुख, जाचकता अकुलानी।  यह अधिकार सौंपिये औरिह, भीख भली में जानी॥  प्रेम-प्रसंसा-बिनय-व्यंगजुत, सुनि बिधिकी बर बानी। —एसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको जो प्रेमसे नहीं भजते, वास्तवमें वे शिवके तत्त्वको नहीं जानते, अतएव उनको मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनको मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनको मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनको लिये और क्या कहा जाय। अताएव प्रिय पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्न निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवको शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावको अमृतमयी कथाओंको उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तों अयुक्त उनका रहस्य समझनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करता। (२) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये पाठन नियः शरा शास्त्रानुकल करनेने स्था स्थान्य (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये वान्य-भावसे रदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति और प्रमान करना। (४) उपर्वृक्त स्वरस्य में सन्तक सन्ता। (४) उपर्वृक्त स्वरस्य में सन्तक करना। (५) अगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये वान्य-भावसे रदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति और प्रमान श्राना श्रान करना। (५) उपर्वृक्त स्वरस्यको समझकर प्रभावसिक व्यार्थ प्रमान् स्वर्का मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रमान्यके गुमम करना। (५) उपर्वृक्त स्वरस्यको समझकर प्रभावसिहत व्यार्थिक भगवान् श्वात्र प्रमान्वके तत्त्वको प्रमान्वका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रमान्वके तत्त्वको प्रमान्वका मनकरना। (५) अप्रवृक्त स्वरस्यको समझकर प्रभावसिहत वान्यस्यक्ति स्वर्णाक्ति ह्वार व्यार्थ समझकर कृतकृत्व हो जाता है, अर्थात् प्रमानका भगवान् श्वावक रव्यक्ति (प्रमान करना) (५) उपर्वृक्त सम्प्रमान स्वर्णाक करने चित्र सम्यक्ति व्यार्य प्रमान स्वर्णाक करने चित्र सम्यक्ति व्यार्य प्रमान करना। (५) उपर्वृक्त सम्यक्ति स्वर्य सम्यक्ति व्यार्य प्रमान स्वर्णाक सम्यक्ति व्यार्य सम्यन्य सम्यक्ति व्यार्य सम्यक्ति व्यार्य सम्यक्ति व्यार्य सम्यक्ति व	जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुखकी नहीं निसानी।	•
पह अधिकार साँपिये औराहं, भीख भली में जानी॥ प्रेम-प्रसंसा-विनय-व्यंगजुत, सुनि विधिकी वर वानी। लसी मुदित महेस मनिहं मन, जगत-मातु मुसुकानी॥ —ऐसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको जो प्रेमसे नहीं भजते, वासतवमें वे शिवके तत्वको नहीं जानते, अतएव उनका मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्न निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझे तो नोचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेप्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेक लिये मानकरा। अते उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राप्त- करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राप्त- वितय-भावसे हदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति वीत्य-भावसे हदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति वीत्य-भावसे हदा फकरचा। (३) भगवान् शंकरके प्रम्म होनेके लिये वितय-भावसे हदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति वीत्य-भावसे हदा श्रवके समझकर प्रभावसोहित वित्य-भावसे हदा श्रवके समझकर प्रभावसोहित वित्य-भावसे हदा श्रवके समझकर प्रभावसे पर-पद्पर भगवान्की दयाका (५) अर्वुक्त सहस्यको समझकर प्रभावसिक तत्त्वको प्रमावन्त वित्तन (ध्यान) तो निरत्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पर-पद्पर भगवान्की दयाका (५) उपवृत्तिको त्यागकर प्रमपूर्वक सबके साथ प्रमाव करता। हो अत्रुक्त स्वर्वार होनेक लिये प्राणप्यन्त होनेक लिये प्राणपर्यन्त चेप्टा प्रमाव करता। हो अत्रुक्त स्वर्वार सुर्या होनेक लिये प्राणपर्यन्त चेप्टा (५) अर्वात्व वित्तन होनेक ति वित्तन होनेक ति वित्तन होनेक लिये प्राणपर्यन्त चेप्टा प्रमाव करता। हो अर्वुक्त सुर्या सुर्या सुर्या सुर्या सुर्या सुर्या सु	तिन रंकनकौ नाक सँवारत, हौं आयो नकबानी॥	3
प्रम-प्रसंसा-विनय-व्यंगजुत, सुनि विधिकी वर वानी। लुलसी मृदित महेस मनर्हि मन, जगत-मातृ मुसुकानी॥ —ऐसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको जो प्रेमसे नहीं भजते, वास्तवमें वे शिवके तत्त्वको नहीं जानते, अतएव उनका मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्र निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लोनेकी चेट्या करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवको शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शंकरके प्रम- प्रमन्तिक पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरके प्रम- इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रमम्भावसे गुपत जण करनो। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंक द्वारा प्रमम्भावसे गुपत जण करना। (४) 'उर्युक्त रहस्य को समझकर प्रमावस्त्रोंको द्वारा करना शिवके स्वरूपक प्रमावन्ति द्वारा करना। (४) 'उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित वित्रच भगवान् शिवके स्वरूपका अद्धा-भिक्तार्वित विशेष मायान् स्वाहिये। यदि अनन्य भगवान् चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और इसके तिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य अत्राप्त करिता होता हो है और प्रमावन्त करना श्रमम्भावसे पुप्त जण करना। (४) 'उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित व्याका (५) उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित व्याका (५) उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित व्याका (५) उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित वित्रवा करना। (४) उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित वित्रवा करना। (५) उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित वित्तत्त होतो है। अत्रव्व करना। (५) उर्युक्त रहस्यको समझकर प्रमावसित वित्रवा होनेक त्विये प्राणपर्यन्त वेच्या प्रमावका समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका नित्रवा होनेक तिये प्राणपर्यन्त वेच्या	दुख-दीनता दुखी इनके दुख, जाचकता अकुलानी।	यथाशक्ति यज्ञ, दान, तप, सेवा एवं वर्णाश्रमके अनुसार
तुलसी मुदित महेस मनहिं मन, जगत-मातु मुसुकानी॥ — ऐसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको जो प्रेमसे नहीं भजते, वास्तवमें वे शिवके तत्त्वको नहीं जानते, अतएव उनका मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्न निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तरा। और उनके अनुसार आचरण करनेक लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (३) भगवान् शंकरके प्रम समझकर लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (३) भगवान् शंकरके अम्म सहिंका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसिहत वथाहिव भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्ताहिव भगवान् शिवके तत्त्वको यथाहिव भगवान् शिवके करक्षपका श्रद्धा-भिक्ताहिव सम्मुकंक करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसिहत वथाहिव भगवान् शिवके तत्त्वको समझकर प्रभावसिहत व्यथाहिव भगवान् श्वार प्रमुर्वक तत्त्वको वत्त्वन भगवान् शिवके तत्त्वको समझकर प्रभावसिहत व्यथाहिव भगवान् श्वार प्रमुर्वक सबके प्राप्य व्यथाहिव भगवान् शिवके तत्त्वको वत्र ने लिये जोश प्रभावको समझकर अवस्थाक स्वर्णका विवर्णक साधनोंको मनुष्य कटिबद्ध होकर उपर्युक्त साधनोंको स्वर्णक स्वर्णक स्वर्णक अवस्थास सदा-सर्वदा करता। (५) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रमुर्वक साम-जपका अभ्यास सदा-सर्वटा करता। (५) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रमुर्वक साधनोंको मनुष्य कटिबद्ध होकर ज्यां- व्यव्यक्ता, रहस्य और प्रभावको अनुष्य विवर्ध होले स्वर्णका अनुभव तरा चित्र करता चाहिये। इन सक्त साधनोंको करता चेहिये। इन सक्त साधनोंको स्वर्यक करता। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेक लिये प्राप्य प्रमुर्वक करता। (४) 'ॐ नमः शिवाव' प्रमुर्वक स्वर्णक स्वर्य प्रमुर्वक करते होत साधनोंको मनुष्य करतिक नियं करता। (५) अपर्यंत चेद्य स्वर्य स्वर्	यह अधिकार सौंपिये औरहिं, भीख भली मैं जानी॥	जीविकाके कर्मोंको करना।
—ऐसे भोलेनाथ भगवान् शंकरको जो प्रेमसे नहीं भजते, वास्तवमें वे शिवके तत्त्वको नहीं जानते, अतएव उनका मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्र निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तेंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझके लिये मनकरना और उनके अनुसार अवारण करनेके लिये प्राण-पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दादि श्रद्धा और प्रमेव करता। (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दादि श्रद्धा और प्रमेव करता। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके विये प्रणावन्त चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और उपर्युक्त सावसों द्वारा प्रमावाक्ष ध्वान करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसित्रत यथारिव भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा भगवान् शिवके तत्त्वको व्यार्व प्रमावन्त स्वयं भावान् स्वयं भावान् स्वयं भावान् स्वयं भावान् स्वयं भावान् स्वयं भावान् स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं भावान् स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं भावान् स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं भावान् स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं भावान् स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं भावन्त स्वयं भावन्त स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं भावन्त स्वयं भावन्त स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं भावन्त स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्त स्वयं भावन्त स्वयं प्रमावन्य स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्य स्वयं किर्य प्रमावन्त स्वयं प्रमावन्य स्वयं स्वयं किर्य प्रमावन्य प्रमावन्य स्वयं प्रमावन्य स्वयं प्रमावन्य स्वयं स्वयं किर्य स्वयं प्रमावन्य स्वयं प्रमावन्य स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं प्रमावन्य स्वयं स्वयं स्वयं	प्रेम-प्रसंसा-बिनय-ब्यंगजुत, सुनि बिधिकी बर बानी।	
प्रजते, वास्तवमें वे शिवके तत्त्वको नहीं जानते, अतएव उनका मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्न निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये अद्या और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये अद्या और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये अद्या और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये अत्रा और प्रमेव करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये अत्रा और प्रमेव करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति और प्रार्थान करना। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसित यथार्हच भगवान् शिवके स्वरूपका अद्या- अववहारकालमें— (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेम आता है। जतएव भगवान् शिवके तत्वको प्रमावको त्यागकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेमभावको त्यागकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रमावको त्यागकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेमभावको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावको त्यागकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रमावको त्यागकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रमावको त्यागकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रमावको त्यागकर उनके स्वरूपका निष्वत्व वेटा प्रमावको त्यागकर प्रमावको समझकर अत्रवेवते तेवते निष्काम प्रमावको निष्ते निष		9
जनका मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक जनके लिये और क्या कहा जाय। अतएल प्रिय जिस्तर ध्यान होनेके लिये चलते-फिरते, उठते-बैठते, पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्र निवेदन है, यदि जापलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पिवत्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय है, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्वको जाननेवाले भक्तेंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत् आर उनके अनुसार आचरण करनेके लिये मनन करना अत्र उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना अत्र उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना श्रव किये हो अतर्प्य निक्तर वेदि हो तो चली जाती है। इसलिये कियेब्र होकर उपर्युक्त साधनोंको करने किये भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि (३) भगवान् शिवको शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि (४) भगवान् शिवको शान्त-मूर्तिका स्व शान्त-मूर्तिका स्व शान्त-मूर्तिका स्व शान्त-मूर्तिका स्व श	`	`
उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्र निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशक्ति उन्हें काममें लानेकी चेप्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे हित्य करना। (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसो हित्य करना। (३) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसो करना। (३) उपर्वृक्त सहस्य प्रेम होनेके लिये प्राण्वान्त विन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता हो है और द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त सहस्यको समझकर प्रभावसहित विष्कामभावसे ध्यान करना। (७) उपर्वृक्त सहस्यको समझकर प्रभावसहित विष्कामभावसे ध्यान करना। (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमस्वकी त्राग्व समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रमावकी निरन्तर ध्यान होनेके लिये चलति-किरते। त्यागकर सदगुण और सदाचारके उपार्जनके लिये हर समय कोशिश करते स्वाचारके उपार्जनके लिये हर समय कोशिश करते स्वाचारकर करोः स्वच्या के उपार्जके प्राच्चाकर सद्यार्थ करते ह्वाच्या करने स्वच्या करते स्वाच्या करने स्वच्या करते स्वच्या होनेक लिये विष्य स्वच्या होनेक लिये विष्य स्वच्या होनेक लिये हिय		
पाठकगणो! आपलोगोंसे मेरा नम्र निवेदन है, यदि आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशिक उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तेंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये श्रद्धा और प्रेमची नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति और प्रार्थना करना। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनक द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित व्यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्सिहत प्रमानका भावने श्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रमानका समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरक्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	उनका मनुष्य-जन्म लेना ही व्यर्थ है। इससे अधिक	`
अपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको समझकर यथाशक्ति उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पिवत्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्-शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण-पर्यन्त कोशिश करना। (१) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये कियो विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेमकी प्राण्वनको शार्यान करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नशीं प्रार्थना करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नशीं प्रार्थना करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित व्यारहिच भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्सहित विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेम हो चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम हे अतर उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित व्यारहिच भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्सहित विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेमकी प्राप्तको श्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् सावधान स्वर्धार समझकर प्रभावसहित व्यारहिच भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्सहित विशेष सावका समझकर उनके स्वरूपका भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्सहित विशेष सावका समझकर उनके स्वरूपका मिन्दिक सावका प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका मिन्दिका प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका में प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका में प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका में प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका में प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका स्वरूपका समझकर समझकर स्वरूपका समझकर उनके स्वरूपका समझकर उनके स्वरूपका समझकर समझकर समझकर समझकर समझकर समझकर समझकर समझका समझकर समझकर समझकर समझकर समझकर समझकर समझकर	उनके लिये और क्या कहा जाय। अतएव प्रिय	निरन्तर ध्यान होनेके लिये चलते-फिरते, उठते-बैठते,
समझकर यथाशक्ति उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें— (क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण होकर— (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति और प्रार्थना करना। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित वथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्सहित विष्ये वयान करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित वथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्सहित (ख) व्यवहारकालमें— (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रमावको निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा		
(क) पवित्र और एकान्त स्थानमें गीता अध्याय ह, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवको शरण होकर— ज्यों करता जाता है, त्यों-ही-त्यों उसके अन्तःकरणकी (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रित्रता, रहस्य और प्रभावका अनुभव तथा अितशय प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत् शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राणपर्यन्त कोशिश करना। सबसे बढ़कर है। अतएव नाना प्रकारके कमोंके बाहुत्यके कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रमावन्त भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति और प्रार्थना करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रमावन्त भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति और प्रार्थना करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा–भक्तिहित विष्यो निरन्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पद—पदपर भगवान्की दयाका प्रमापदको प्रमापदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रमापदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् श्रवके प्रमापदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् श्रवके प्रमापदके तत्त्वको प्रमापदको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रमापवको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रमापवको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रमापूर्वक सबके साथ	आपलोग उचित समझें तो नीचे लिखे साधनोंको	(५) दुर्गुण और दुराचारको त्यागकर सद्गुण और
होकर—  (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना अगैर उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना।  (२) भगवान् शिवको शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि अद्धा और प्रेमसे नित्य करना।  (३) भगवान् शिवको शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि अद्धा और प्रेमसे नित्य करना।  (३) भगवान् शिवको शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि अद्धा और प्रेमसे नित्य करना।  (३) भगवान् शिवको शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि अद्धा और प्रेमसे नित्य करना।  (३) भगवान् शिवको शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणको भी बाधा न आये, अद्धा और प्रेमसे नित्य करना।  (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रेमको प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कर्मोंके करनेमें कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान् शिवके स्वरूपको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका अद्धा-भक्तिसहित विच्यान करना।  (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका अद्धा-भक्तिसहित विच्यान करना।  (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका अद्धा-भक्तिसहित विच्यान करना।  (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका अद्धा-भक्तिसहित विच्यान करना।  (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका निष्काम प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	समझकर यथाशक्ति उन्हें काममें लानेकी चेष्टा करें—	सदाचारके उपार्जनके लिये हर समय कोशिश करते
चों करता जाता है, त्यों -ही-त्यों उसके अन्त:करणकी (१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत्- शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये श्रेम त्राया श्वासोंके द्वारा प्रमणवसे गुण- विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तृति और प्रार्थना करना। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके तत्त्वको यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित (ख) व्यवहारकालमें— (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा प्रमावको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रमावको त्यागकर प्रमापूर्वक सबके साथ प्रमावको त्यागकर प्रमापूर्वक सबके साथ प्रमावको त्यागकर प्रमाप्र्यंन चेष्टा प्रमावको त्यागकर प्रमाप्र्वंक सबके साथ प्रमावको त्यागकर प्रमाप्र्यंन चेष्टा प्रमावको त्यागकर प्रमाप्र्यंन सबके साथ प्रमावको त्यागकर प्रमाप्र्यंन चेष्टा		रहना।
(१) भगवान् शंकरके प्रेम, रहस्य, गुण और प्रवित्रता, रहस्य और प्रभावका अनुभव तथा अतिशय प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत् जाती है। इसिलये किटबद्ध होकर उपर्युक्त साधनोंको करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण-पर्यन्त कोशिश करना। पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्राण-प्रवेन करने चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेमकी प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कमोंके करनेमें कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसिहत यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा—भक्तिसहित परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा प्रेमभावसे निरन्तर होनके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	६, श्लोक १० से १४ के अनुसार भगवान् शिवकी शरण	-
प्रभावकी अमृतमयी कथाओंका उनके तत्त्वको जाननेवाले भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत् जाती है। इसिलये किटबद्ध होकर उपर्युक्त साधनोंको करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। सबसे बढ़कर है। अतएव नाना प्रकारके कमोंके बाहुल्यके कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रेमभावसे रदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति और प्रार्थना करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रेमकी प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कमोंके करनेमें कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका अनुभव करता हुआ मनुष्य भगवान् सदाशिवके तत्त्वको यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तिहित त्याकि प्रेमभावसे ध्यान करना। (५) उपर्युक्त सक्तर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावको निरन्तर होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	होकर—	ज्यों करता जाता है, त्यों-ही-त्यों उसके अन्त:करणकी
भक्तोंद्वारा श्रवण करके, मनन करना एवं स्वयं भी सत् जाती है। इसलिये किटबद्ध होकर उपर्युक्त साधनोंको शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- पर्यन्त कोशिश करना। सबसे बढ़कर है। अतएव नाना प्रकारके कर्मोंके बाहुत्यके कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेम कोनेके लिये प्राण- भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्राण- भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान् का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसिहत यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् निष्कामभावसे ध्यान करना। परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके तत्त्वको प्रमावसे प्रमावको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	`	•
शास्त्रोंको पढ़कर उनका रहस्य समझनेके लिये मनन करनेके लिये कोशिश करनी चाहिये। इन सब साधनोंमें करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण- भगवान् सदाशिवका प्रेमपूर्वक निरन्तर चिन्तन करना सबसे बढ़कर है। अतएव नाना प्रकारके कर्मोंके बाहुल्यके तरण जनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रेमकी प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कर्मोंके करनेमें कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भक्तिसहित (ख) व्यवहारकालमें— (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	-	
भगवान् सदाशिवका प्रेमपूर्वक निरन्तर चिन्तन करना पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रेमकी प्रगावतों कारण शास्त्रानुकूल कर्मों के करनेमें विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति और प्रार्थना करना। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित (ख) व्यवहारकालमें— (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	`	9
पर्यन्त कोशिश करना। (२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि अद्भा और प्रेमसे नित्य करना। (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति और प्रार्थना करना। (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित (ख) व्यवहारकालमें— (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ सबसे बढ़कर है। अतएव नाना प्रकारके कर्मोंके बाहुल्यके कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेमकी प्रगाढ्ताके कारण शास्त्रानुकूल कर्मोंके करनेमें कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका अनुभव करता हुआ मनुष्य भगवान् सदाशिवके तत्त्वको यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम	·	
(२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना। इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रेमकी प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कर्मोंके करनेमें विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथार्थक्रपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	करना और उनके अनुसार आचरण करनेके लिये प्राण-	`
श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना।  (३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति और प्रार्थना करना।  (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना।  (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित (ख) व्यवहारकालमें—  (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ  इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेमकी प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कर्मोंके करनेमें कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका अनुभव करता हुआ मनुष्य भगवान् सदाशिवके तत्त्वको यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम	पर्यन्त कोशिश करना।	•
(३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये प्रेमकी प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कर्मोंके करनेमें विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा और प्रार्थना करना।  (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना।  (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके यथार्थरूपसे समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	(२) भगवान् शिवकी शान्त-मूर्तिका पूजन-वन्दनादि	कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये,
विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, िकंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके प्रभावन्तका चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसिहत यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् निष्कामभावसे ध्यान करना। परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	श्रद्धा और प्रेमसे नित्य करना।	
और प्रार्थना करना।  (४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना।  (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् निष्कामभावसे ध्यान करना।  (ख) व्यवहारकालमें—  (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	(३) भगवान् शंकरमें अनन्य प्रेम होनेके लिये	
(४) 'ॐ नमः शिवाय'—इस मन्त्रका मनके भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् विष्कामभावसे ध्यान करना। परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	विनय-भावसे रुदन करते हुए गद्गद वाणीद्वारा स्तुति	•
द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना। उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका (५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसिहत अनुभव करता हुआ मनुष्य भगवान् सदाशिवके तत्त्वको यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसिहत यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा		•
(५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित अनुभव करता हुआ मनुष्य भगवान् सदाशिवके तत्त्वको यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भिक्तसहित यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके (ख) व्यवहारकालमें— प्रमावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	(४) <b>'ॐ नमः शिवाय'—</b> इस मन्त्रका मनके	भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और
यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भक्तिसहित यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् निष्कामभावसे ध्यान करना। परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके (ख) व्यवहारकालमें— प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	द्वारा या श्वासोंके द्वारा प्रेमभावसे गुप्त जप करना।	उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका
निष्कामभावसे ध्यान करना। परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके (ख) व्यवहारकालमें— प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	(५) उपर्युक्त रहस्यको समझकर प्रभावसहित	अनुभव करता हुआ मनुष्य भगवान् सदाशिवके तत्त्वको
(ख) व्यवहारकालमें— प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम (१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	यथारुचि भगवान् शिवके स्वरूपका श्रद्धा-भक्तिसहित	यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात्
(१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा	निष्कामभावसे ध्यान करना।	•
•	(ख) व्यवहारकालमें—	
सद्-व्यवहार करना। करनी चाहिये। [समाप्त]	(१) स्वार्थको त्यागकर प्रेमपूर्वक सबके साथ	
<b>▼</b>	सद्-व्यवहार करना।	करनी चाहिये।[समाप्त] ▶ <del>••</del>

(पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) उनमें इंग्लैण्ड, आयरलैण्ड और स्कॉटलैण्डके मूल किसीने एक संतसे पूछा—'परमेश्वरकी सबसे बडी आज्ञा क्या है?' निवासी भी थे तथा रूस और इटलीके भी। डच, बेलजियन, स्कैण्डेनेवियन, जर्मन, फ्रांसीसी, चैक, स्विस, संत बोले—'पहली आज्ञा तो यह है कि तू अपने पूरे मन, प्राण और बुद्धिसे परमेश्वरसे प्रेम कर। दूसरी रूमानियन, हंगेरियन, फिनिश, कनाडियन आदि भी थे। यह कि तू अपने पड़ोसीसे अपने समान ही प्रेम कर।' चुने हुए ७११ भले पड़ोसियोंमें ७४ प्रतिशत देहातमें पैदा हुए थे, २६ प्रतिशत नगरोंमें। धर्मकी दुष्टिसे ९८

भला पड़ोसी कौन ?—एक शोध

'पडोसीसे अपने समान ही प्रेम कर!' कितनी

सीधी और सरल बात! पर करनेमें कितनी टेढी!

पड़ोसी हो जाना एक बात है, पड़ोसी बनना बिलकुल दुसरी बात है। मकानकी दीवालका मिला होना इस बातका सूचक नहीं कि इधरके और उधरके

पडोसीका हृदय भी मिला हुआ है। हृदय मिला हो तो सारा विश्व अपना पड़ोसी है। फिर कोई दो कदमपर रहता हो या दो कोसपर। दिल्लीमें रहता हो या वाराणसीमें, कलकत्तामें रहता हो, चाहे लन्दन या न्यूयार्कमें।

पडोसी तो वह, जिसका दिल मिला हो। पडोसी तो वह, जो पडोसीके दु:ख-दर्दको अपना दु:ख-दर्द मानता हो और मानकर ही न रह जाता हो, उसे दूर करनेके लिये जी-जानसे प्रयत्न भी करता हो।

'भला पड़ोसी कौन तथा कौन-कौन-से गुण होते हैं भले पडोसीमें?'

आजसे लगभग पैंसठ साल पहले प्रसिद्ध समाजशास्त्री पिलिरिम सोरोकिनके तत्त्वावधानमें अमेरिकामें

अपने पडोसियोंसे प्रेम करनेवाले व्यक्तियोंका जो शोध हुआ, \* उसमें उनसे पूछे गये अनेकों प्रश्नोंमेंसे यह भी एक प्रश्न था। भले पडोसी होनेके नाते वे अवश्य ही

अधिकारी थे इस प्रश्नका उत्तर देनेके।

शोधके पात्रोंमें भी विभिन्न देशोंका प्रतिनिधित्व था।

अमेरिकामें भिन्न-भिन्न देशोंसे आकर लोग बस गये और अब सब मिलकर 'अमरीकन' कहलाते हैं।

Hinduism Discord Sarver https://dsagg/dbarmarhizMADEIN/TELLOVE BY Avinash/Sha

जुटा रहता है। सेवा-सहायताका अधिकांश कार्य महिलाएँ ही करती हैं, विशेषत: गृहिणियाँ। इन भले पडोसियोंमें सबसे अधिक मात्रा थी मध्यम श्रेणीवालोंकी, उनसे कम निम्न श्रेणीवालोंकी और उच्च श्रेणीवालोंकी सबसे कम। आमदनीकी दृष्टिसे तीन

प्रतिशत आस्तिक थे, २ प्रतिशत नास्तिक। ६१ प्रतिशत लोग कभी-कभी अपने धर्मस्थल-चर्चमें चले जाते थे, ९ प्रतिशत कभी नहीं जाते थे। हाँ, ३० प्रतिशत नियमित

रूपसे चर्च जाते थे। अपनेको खुल्लमखुल्ला 'नास्तिक' कहनेवालोंमें भी प्रेम और करुणाकी भावना कम न थी।

ऐसी ही एक महिलाके उदगार थे—'मैं तो केवल एक

बात जानती हूँ कि मैं जब किसी व्यक्तिको विपत्तिमें फँसा देखती हूँ तो मुझसे उसका दु:ख-दर्द देखा नहीं जाता। मैं

थीं महिलाएँ। पुरुषोंकी संख्या २३ प्रतिशतसे भी कम

थी। अमेरिकन पुरुषवर्ग रात-दिन अपने काम-धंधेमें ही

इन भले पडोसियोंमें तीन चौथाईसे कुछ अधिक

रह नहीं सकती उसकी भरसक सेवा किये बिना।'

चौथाईकी आमदनी ३ हजारसे १० हजार डालरतक थी। लगभग १० प्रतिशतकी आमदनी इनसे अधिक थी, शेषकी इनसे कम। व्यवसायकी दुष्टिसे सम्पन्न गृहिणियोंके अतिरिक्त एक तिहाई लोग सरकारी, गैर सरकारी सेवाओंमें थे-कोई शिक्षणमें, कोई स्वास्थ्यमें। १० प्रतिशत व्यापारी थे, ५ प्रतिशतके लगभग किरानी बाबू थे और

५ प्रतिशत किसान तथा ५ प्रतिशत मजदूर थे। स्नातकोत्तर शिक्षणवाले १० प्रतिशत थे, अधिकांश हाई स्कूल या कॉलेजके छात्र रह चुके थे, एक चौथाई प्राइमरीतक ही

संख्या ५] भला पड़ोसी व	<b>तौन</b> ?—एक शोध ११
**************************************	*************************************
पढ़े थे और कुछ लोग सर्वथा निरक्षर भी थे।	बादमें उन्हें थोड़ी-सी सहायता मिली अवश्य, पर इन
मतलब, हर तरहके और हर रंगके थे—ये भले	बढ़इयोंकी हार्दिक सहायता की समतामें वह नगण्य थी।
पड़ोसी।	विभिन्न राज्योंमें समाज-कल्याणके लिये लाखों-
× × ×	करोड़ोंके बजट बनते हैं, पर सभी जानते हैं कि ऐसी
हाँ तो भले पड़ोसीकी परिभाषा बताते हुए इनमेंसे	अधिकांश सहायता ठण्डी, धीमी, प्राणहीन और हृदयहीन
४१ प्रतिशत लोगोंने कहा—'भला पड़ोसी वह, जो	होती है।
'स्वर्ण-नियम'को अमलमें लाता है।''स्वर्ण-नियम' है	भला पड़ोसी तो कष्टको देखते ही दौड़ पड़ता है
ईसाका वह उपदेश कि 'दूसरोंके साथ तुम वैसा ही	ं सेवा-सहायताके लिये। सच्ची सहानुभूति, सच्चे प्रेम
व्यवहार करो, जैसा कि तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे	और सौहार्दसे भरे उसके थोड़े–से शब्द पीड़ितोंको अपार
साथ करें।' अर्थात् भारतका पुरातन सिद्धान्त—'आत्मनः	शान्ति देते हैं। समयपर सद्भावसे दी गयी चन्द कौड़ियाँ
प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।' (पञ्चतन्त्र ३।१०३)	अशर्फियोंको भी मात करती हैं।
२० प्रतिशत लोगोंने कहा—'भला पड़ोसी वह, जिसके	× × ×
हृदयमें सारी मानवताके लिये प्रेम है, दया है, मैत्री है।	अमेरिकाकी एक नयी बीमारी है—'बोरडम'—
१९ प्रतिशत लोगोंने कहा—'भला पड़ोसी वह, जो	ं ऊब, उकताहट, उदासीनता, क्लान्ति। रोटी, कपड़ा,
दूसरोंमें नि:स्वार्थ दिलचस्पी लेता है।' ९ प्रतिशत	मकान आदिकी कोई खास चिन्ता न होनेपर भी
लोगोंने कहा—'भला पड़ोसी वह, जो ईश्वरमें विश्वास	आदमीको चैन नहीं। परेशानी-ही-परेशानी है। जीवनमें
और श्रद्धा रखता है।' ७ प्रतिशत लोगोंने कहा—'भल	रस नहीं, आनन्द नहीं, सुख नहीं, शान्ति नहीं।
पड़ोसी वह, जिसमें सहनशीलता भी है और धैर्य भी।	भले पड़ोसियोंके ५०६ सत्कृत्योंका विश्लेषण करनेपर
४ प्रतिशत लोगोंने कहा—'भला पड़ोसी वह, जिसके	२३.७ प्रतिशत कार्य ऐसे निकले, जो इस 'ऊब' के लिये
हृदयमें दूसरोंकी सेवाकी भावना भरी रहती है।'	मरहम थे। उन सत्कृत्योंके कारण ही लोगोंके जीवनमें
इस बातपर सभीने जोर दिया कि 'भला पड़ोसी	नीरसताके बदले रस आने लगा तथा आशा, सुख, शान्ति
'स्वर्ण-नियम'को केवल जानता ही नहीं, अमलमें भी	ं और आनन्दके दर्शन होने लगे, उनका जी बहलने लगा।
लाता है।'	कितनी बड़ी बात!
तात्पर्य यह कि भला पड़ोसी प्रेम, सेवा, सद्व्यवहार,	भले पड़ोसियोंने अपने सीमित क्षेत्रमें ९ प्रतिशत आपसी
मैत्री और करुणाका मूर्तिमान् स्वरूप होता है।	झगड़े निपटाये, ९ प्रतिशत बीमारोंकी सेवा की, ७ प्रतिशत
× × ×	शिक्षाकी, ५ प्रतिशत मकानकी, ५ प्रतिशत कपड़ोंकी और
'भला पड़ोसी करता क्या है?'	३ प्रतिशत रोटीकी समस्याएँ सुलझायीं तथा ३ प्रतिशत
भला पड़ोसी करता है—मानवताकी सेवा, बिन	आर्थिक समस्याओंके निराकरणमें योगदान दिया।
किसी स्वार्थके। किसीको भी संकटमें देखकर वह दौड़	'भले पड़ोसियोंसे किन लोगोंको लाभ पहुँचा?'
पड़ता है, बिना किसी भेद-भावके।	शोधके दिनोंतक युद्धकी छाया मिटी नहीं थी।
मेनके जंगलमें एक बार आग लगी। बहुत-से घर	अत: अधिकतर ऐसे लोग ही लाभान्वित हुए, जिन्हें
जलकर राख हो गये, बढ़इयोंकी एक यूनियन थी वहाँ	। युद्धके कारण त्रस्त होना पड़ा था। उनमें २२ प्रतिशत
उसके कुछ सदस्योंने आत्मप्रेरणासे अपने अवकाशके	
क्षणोंमें अपने पड़ोसियोंके कितने ही मकान नये सिरेसे	१२ प्रतिशत अन्य लोग। प्रौढ़ थे ७ प्रतिशत, दरिद्र ३
बनाकर खड़े कर दिये। रेडक्रास—सरकारकी ओरसे	प्रतिशत, वृद्ध २ प्रतिशत और १-१ प्रतिशत थे छात्र,

भाग ९१ अपराधी, दुखी माताएँ, अन्धे और अपाहिज। प्रतिदिन ही तो हम देखते हैं कि लोग एक फ्लैटमें रहते हैं, एक मकानमें रहते हैं, एक अहातेमें रहते हैं, × 'आपको भले पडोसी बननेकी प्रेरणा कैसे मिली एक मुहल्लेमें रहते हैं, एक गाँव, कस्बे या नगरमें रहते तथा पड़ोसियोंकी सेवा-सहायताकी भावना आपमें कैसे हैं; किंतु उन्हें अपने पड़ोसियोंसे कोई मतलब नहीं। पनपी?' किसीका नाम पूछिये, पता पूछिये, हाल पूछिये— २९ प्रतिशत लोगोंने कहा—'हमारे माता-पिताने, कुछ मालूम नहीं। हमारे अगल-बगल कौन रहता है, हमारे परिवारने हमें ऐसी प्रेरणा दी।' २९ प्रतिशत कौन बीमार है, कौन किस कष्टमें, किस विपत्तिमें फँसा है, कौन रो रहा है, चिल्ला रहा है, भूखा है, नंगा है— बोले—'हमें लगा कि मानव-प्रकृतिमें स्नेह और सहकारिता है तथा मानव-विकासके लिये पड़ोसियोंकी सेवा अनिवार्य हमें कुछ पता नहीं। हमें दूसरोंसे कोई प्रयोजन नहीं। आवश्यकता है।' २१ प्रतिशतने कहा—'धर्मने हमें ऐसी संयोगसे किसीकी चीख-पुकार हमारे कानोंमें पड़ जाती है तो हम मुँह बिदकाकर अपने ट्रांजिस्टरकी प्रेरणा दी।' ११ प्रतिशत बोले—'जीवनके निजी अनुभवोंने हमें पड़ोसियोंकी सेवाके लिये प्रेरित किया।' ८ प्रतिशतने आवाज और तेज कर देते हैं। किसी पड़ोसीकी दुर्दशा आँखोंके आगे पड़ जाती है तो हम आँखें मूँदकर आगे कहा—'स्वाध्याय एवं शिक्षासे हमें इसकी प्रेरणा मिली।' १ प्रतिशतसे कुछ अधिक लोगोंने कहा—'किसी अद्भुत बढ़ जाते हैं। हमें उससे क्या लेना-देना? मरे तो अपनी अनुभवोंने हमें ऐसी प्रेरणा दी कि पड़ोसियोंकी सेवा मौत, जिये तो अपनी मौत! उसके लिये हम क्यों अपने हमारा कर्तव्य है।' १ प्रतिशतसे भी कम लोगोंने कहा आराममें बाधा डालें? कि 'हमें सत्-साहित्यसे ऐसी प्रेरणा मिली।' यों हम अपने घरका कूड़ा-कचरा पड़ोसीके मतलब, सौहार्दपूर्ण पारिवारिक वातावरण, स्नेहिल दरवाजेपर फेंकनेमें कुशल हैं। अपने बच्चोंको पड़ोसीके घरके आगेकी नालीमें मल-मूत्र त्याग करनेके लिये सेवा-भावी माता-पिता, सहकार और स्नेह, धर्म एवं नैतिकताके उपदेश मानवको प्रेरित करते हैं कि वह भला बैठानेका पूरा ध्यान रखते हैं। अपने स्वार्थके लिये पडोसी बने। पड़ोसीको सतानेमें हम रत्तीभर भी संकोच नहीं करते। अमेरिकामें विभक्त-परिवारका बोलबाला है। बच्चे पड़ोसीके द्वारा हमारा कोई निजी लाभ हो जाय तो पैरोंपर खड़े होनेयोग्य हुए कि वे अपनी मड़ैया अलग अवसरका पूरा लाभ उठानेमें हम कभी नहीं चूकते। पर बसा लेते हैं। फिर 'मम्मी' और 'डैडी' से केवल चाय पडोसीके लाभके लिये एक कौडी व्यय करना भी हमें भार लगता है। उसके प्रति सहानुभूतिके दो मीठे शब्द पीने-पिलानेतकका सम्बन्ध रह जाता है। सोरोकिनके बोलनेमें भी हमारा जी कचोट उठता है। इस शोधसे यह बात भी प्रकट हुई कि जिन परिवारोंमें बच्चे अधिक थे और जो संयुक्त-परिवार थे, उन्हींके 'पड़ोसीसे अपने समान ही प्रेम कर।' बच्चोंमें भले पडोसी बननेकी भावना अधिक पल्लवित देखने-सुननेमें कितनी छोटी-सी, सरल-सी बात; पर है कितनी कठिन! हुई। ४५.८ प्रतिशत ऐसे परिवारोंमें ६ या ६ से अधिक बच्चे थे, २४ प्रतिशतमें ४-४, ५-५ बच्चे थे। शोधसे यह बात भी प्रकट हुई कि भले पडोसियोंमें ९० से ९२ पडोसमें आग लगे तो हम भी उसकी लपटसे बच प्रतिशत लोगोंके हृदयमें अपने अध्यापकोंके प्रति अत्यधिक नहीं सकते। पडोसमें महामारी फैले तो हम भी उसकी चपेटमें आये बिना रह नहीं सकते। पडोसमें बाढ आये आदर और सम्मानकी भावना थी। तो उसके प्रवाहमें पड़े बिना हमारी मुक्ति नहीं। पड़ोसमें X

संख्या ५] भला पड़ोसी के	नि?—एक शोध १३
***********************************	**************************************
मुर्दा पड़ा हो तो उसकी बदबूसे हमारा त्राण नहीं।	न रखो, १६.किसीसे भी छल-कपट न करो, १७.
पड़ोसमें कोई उपद्रव हो, दंगा-फसाद हो, कोई संकट	दिखावटी संधि न करो, १८. उदारता न छोड़ो, १९.
आ पड़े तो उसका स्पर्श हमें होगा ही। पुलिस आयेगी	बुराईके बदले बुराई न करो, २०. किसीके साथ
तो हमें गवाही भी देनी ही पड़ेगी।	अत्याचार न करो, २१. तुम्हारे साथ कोई अत्याचार करे
तात्पर्य, हर समय, हर घड़ी, पड़ोसीसे हमारा	तो शान्तिपूर्वक सह लो, २२. शत्रुसे भी प्यार करो, २३.
प्रयोजन पड़ता है। पड़ोसी ही सबसे पहले हमारे काम	गालीके बदले आशीर्वाद दो, २४. किसीकी निन्दा न
आता है, भले ही हम उसकी ओर कोई ध्यान न दें।	करो, २५. किसी व्यक्तिसे घृणा न करो, २६. किसीसे
हमारी शानदार कोठी हो या टूटा-फूटा झोपड़ा, हम	ईर्ष्या मत करो, २७. लड़ाई-झगड़ेमें रस न लो, २८.
अमीर हों या गरीब, ब्राह्मण हों या शूद्र, डिग्रीधारी	बड़ोंका आदर करो, २९. छोटोंसे प्यार करो, ३०.
ग्रेजुएट हों या निरक्षर भट्टाचार्य—कोई भी हों, पड़ोसीसे	शत्रुओंका भला मनाओ और दिन डूबनेसे पहले ही
हमारा पाला पड़ेगा ही। हम लाख चाहें, किंतु पड़ोसीसे	विरोधीसे क्षमा माँगकर सन्धि कर लो।
दूर हम रह नहीं सकते। पड़ोसी भले होंगे तो हमारी भी	कैसे उत्तम सत्कार्य!
प्रतिष्ठा होगी, बुरे होंगे तो हमें भी बदनामीका मौर अपने	पतंजलिकी, भगवान् बुद्धकी—मैत्री, करुणा और
माथेपर बाँधना पड़ेगा। तब पड़ोसियोंसे दूर-दूर रहनेसे	मुदिताकी भावनाका विस्तार।
मतलब ?	× × ×
माना पड़ोसीके और हमारे स्वार्थींमें संघर्ष होता है,	संत बासिल कहते हैं—'प्रेमके दो रूप हैं—१.
अक्सर होता है, कदम-कदमपर होता है; पर संघर्षसे,	प्रेमास्पदको चोट लगी हो तो उसके दु:खमें दुखी होना
विरोधसे काम चलेगा नहीं। 'जलमें रहे मगरसे बैर'	और २. प्रेमास्पदके सुखमें सुखी होना और उसे सुख
सरासर मूर्खता है। समझदारी तो इसीमें है कि हम	पहुँचाना।'
पड़ोसीसे मिल-जुलकर रहें, प्रेम और सद्भावपूर्वक रहें,	पड़ोसीसे प्रेमका अर्थ है—पड़ोसीके दु:खमें दुखी
उसे अपना बनाकर रहें। प्रेम एक ऐसा रसायन है,	होना। ऐसा कोई काम न करना, जिससे उसे दु:ख हो।
जिससे सारे वैर-विरोध और संघर्ष अपने-आप ही दूर	उसे हर तरहसे सुख पहुँचाना। वह बुराई भी करे तो
हो जाते हैं।	उसके बदलेमें भलाई करना। गाली दे तो भी उसे
× × ×	आशीर्वाद देना।
प्रश्न है कि पड़ोसीसे प्रेम किया कैसे जाय?	लाख दुष्ट हो, लाख बुरा हो हमारा पड़ोसी, हमें
संत बेनेडिक्टने पड़ोसीसे प्रेम करनेके लिये तीस	उसे जीतना है प्रेमसे ही।
सत्कार्योंकी तालिका दी है—१. हत्या न करो, २.	× × ×
अनैतिक आचरण न करो, ३. चोरी न करो, ४. लोभ-	यदि कोई कहता है कि 'मैं ईश्वरसे प्रेम करता हूँ'
लालच न करो, ५. झूठी गवाही न दो, ६. प्रत्येक	और अपने भाईसे वैर करता है तो वह झूठा है। कारण,
व्यक्तिका आदर करो, ७. ऐसा कोई काम न करो, जिसे	जो अपने भाईसे, जिसे उसने देखा है, प्रेम नहीं करता,
तुम अपने लिये नहीं करना चाहते, ८. दुखियोंका दु:ख	वह उस ईश्वरसे कैसे प्रेम कर सकता है, जिसे उसने
मिटाओ, ९. नंगोंको कपड़े दो, १०. बीमारोंको जाकर	देखा ही नहीं।
देखो, ११. मृतकोंका शव-संस्कार करो, १२. कष्ट-	याद रखनेकी बात है—
पीड़ितोंकी मदद करो, १३. दुखियोंको सान्त्वना दो, १४.	यह तो घर है प्रेमका खालाका घर नाहिं।
किसीपर क्रोध न करो, १५. किसीसे बदला लेनेका भाव	सीस उतारे भुइँ धरे तब पैठे या माहिं॥

मौन-व्याख्यान

### ( नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार )

उपदेशकका पद वस्तुत: बहुत ही दायित्वपूर्ण है। सोनेमें सुगन्धके समान है और ऐसा उपदेशक जगत्की

अनुभवी पुरुष ही दूसरोंको उपदेश करनेका अधिकारी

बहुत सेवा कर सकता है। परंतु यह बात ध्यानमें रहनी होता है। जबतक साधना करते-करते किसी विषयमें चाहिये कि जबतक मनुष्यके मनमें आत्मसुधारकी प्रबल

सिद्धि प्राप्त नहीं हो जाती, तबतक उस विषयका आकांक्षा नहीं है—और आत्म-संशोधन और आत्मोत्थानके

उपदेशक बनना अपने और दूसरोंके साथ ठगी करना है। और इसी कारण उपदेशका प्रभाव नहीं पड़ता। खास

करके पारमार्थिक विषयमें तो उपदेशक बनना बहुत ही

कठिन है। उपदेशकमें निम्नलिखित पाँच बातें अवश्य ही होनी चाहिये। १-जिस विषयका उपदेश करे, उसका

पारदर्शी हो; २—जिस साधनाका उपदेश करे, उसको स्वयं करनेवाला हो; ३—उपदेशमें धन, मान, पूजा आदिकी प्राप्तिके रूपमें अपना किंचित् भी स्वार्थ न हो;

४—जिस विषयका उपदेश करे, वह विषय परिणाममें सबके लिये कल्याणकारक हो और ५—उपदेशमें किसी

पाँचों बातें होती हैं, उसके उपदेशका बड़ा प्रभाव पड़ता है। यद्यपि आकर्षक भाषा, शब्दसौन्दर्य और यथायोग्य

भावोंका प्रदर्शन आदि साधन श्रोताओंके चित्तको खींचनेमें बहुत सहायक होते हैं, परंतु ये सब व्याख्यान-कलाकी चीजें हैं। कलाके साथ हृदयके परम शुद्ध और

कल्याणकारक भावोंका संयोग हो, तभी उस कलासे विशेष लोकोपकार होता है। जो कला केवल कलाके

लिये होती है अथवा जिस कलाके प्रदर्शनमें कुवासनाओंके

उत्पादक और वर्द्धक दुषित भावोंका संयोग होता है, वह कला समाजके लिये कभी हितकर नहीं हो सकती, चाहे

वह कितनी ही विकसित और आकर्षक क्यों न हो।

इसके विपरीत जिस अनुभवपूर्ण वाणीमें सत्य, प्रेम,

सरलता और नि:स्वार्थ लोकसेवाकी भावना होती है, वह

कलाकी दृष्टिसे आकर्षक न होनेपर भी समाजके लिये

अत्यन्त कल्याणकारिणी होती है। उपदेशकमें उपर्युक्त

ही उपदेश होते हैं। वे वस्तुत: न तो उपदेशक बनते हैं और न कहलाते हैं। उनकी करनी-कहनीसे अपने-आप ही जगत्को उपदेश मिलता है, और इस सच्चे उपदेशका प्रकारका भी दम्भाचरण न हो। जिस उपदेशकमें ये क्षेत्र आरम्भमें बहुत विस्तृत न होनेपर भी इसका जो

> आगे चलकर बहुत ही व्यापक हो जाता है। उपदेश देनेकी तो इच्छा ही मनमें न होनी चाहिये। अपने शरीर-मन-वाणीसे होनेवाली क्रियाओंमें भी यह भाव न रहे कि इन्हें देखकर लोग इनसे शिक्षा ग्रहण करें। ऐसी चेष्टा

> > करे, जिसमें स्वाभाविक ही सब क्रियाएँ सत्यके आधारपर हों और निर्मल हों, निरन्तर इस बातको देखता रहे कि

मेरे अन्दर सत्त्वगुण बढ़ रहा है या नहीं। यदि सत्त्वगुण बढ़ गया तो रज और तम अपने-आप ही दब जायँगे। सत्त्वकी शक्ति बड़ी प्रबल होती है। जिसके हृदयमें शुद्ध

लिये प्राणपणसे प्रयत्न नहीं किया जाता, तबतक

योग्य सदगुण हैं, उनको भी उपदेशक बननेकी इच्छा

नहीं होनी चाहिये। जबतक ऐसी इच्छा है, तबतक

कुछ-न-कुछ दुर्बलता मनमें छिपी है। महापुरुषोंके

आचरण ही आदर्श सत्कर्म और उनके स्वाभाविक वचन

कुछ प्रभाव होता है, वह बहुत ही ठोस, स्थायी और

सच्ची बात तो यह है कि जिनमें उपदेश देनेके

उपदेशक बनना विडम्बनामात्र है।

सत्त्वभाव है और जिसकी क्रियाओंमें सत्त्वगुणकी प्रबलता है, उसके द्वारा जो कुछ होता है, सभी लोककल्याणकारी

होता है। वह जहाँ निवास करता है, वहाँका वातावरण

िभाग ९१

शुद्ध होता है। वातावरणकी शुद्धिसे परमाणुओंमें शुद्धि आती है और वे परमाणु जहाँतक फैलते हैं, जिसके साथ पाँचां गुंभांक्रण Discord Server https://escapodeharma है, MADE WITH LEOVE BY Avinash/Sha

संख्या ५ ] मौन-व्य	प्राख्यान १५
************	
उपदेशक बनना कोई पेशेकी चीज नहीं है। यह	लोभी होता है तो शिष्य भी वैसे ही बन जाते हैं, अतएव
तो बहुत बड़े अधिकारकी बात है, जो वैसी योग्यता	गुरुका पद स्वीकार करना तो खाँडेकी धारके समान है।
होनेपर ही प्राप्त होता है। जहाँ अयोग्य और अनधिकारी	जो विषयी गुरु अपने दुर्गुणोंका आदर्श सामने रखकर
उपदेशक होते हैं, वहाँ प्रथम तो उपदेशका असर नहीं	शिष्योंके पतनमें कारण होता है, उसकी दुर्गति नहीं होगी
होता और जो कुछ होता है, वह प्राय: विपरीत होता	तो और किसकी होगी?
है। उपदेशककी वाणीके साथ जब लोग उसके आचरणका	इसमें कोई सन्देह नहीं कि अनुभवी तत्त्वज्ञ गुरुकी
मिलान करके देखते हैं और जब वाणी एवं आचरणमें	कृपाके बिना भगवतत्त्वका ज्ञान नहीं हो सकता, और
परस्पर बहुत अन्तर पाते हैं, तब उनकी या तो उस	यह भी ध्रुव सत्य है कि ऐसे गुरुको ब्रह्मा, विष्णु,
वाणीपर श्रद्धा नष्ट हो जाती है अथवा इससे उन्हें यह	महेश्वर और साक्षात् परब्रह्म समझकर सतत प्रणाम और
शिक्षा मिलती है कि कहनेमें अच्छापन होना चाहिये,	आत्मसमर्पण कर देना चाहिये। भगवान्ने कहा है—
क्रिया चाहे उसके विपरीत ही हो और ऐसी शिक्षाके	आचार्यं मां विजानीयान्नावमन्येत्कर्हिचित्।
ग्रहण हो जानेपर मनुष्यमें दम्भादि दोष सहज ही आ	न मर्त्यबुद्ध्यासूयेत सर्वदेवमयो गुरु:॥
जाते हैं, जिनसे उसका पतन हो जाता है। व्यक्तियोंके	मुझको आचार्य गुरु समझना, मनुष्य समझकर मेरी
भाव ही समाजमें फैलते हैं और यों समाजभरका पतन	अवज्ञा या असूया न करना; क्योंकि गुरु सर्वदेवमय
होने लगता है। समाजके इस पतनमें प्रधानतया अयोग्य	होता है।
उपदेशक ही कारण होते हैं।	परंतु यह बात उन्हीं गुरुओंपर लागू होती है, जो
इससे यह सिद्ध होता है कि जो लोग स्वयं सुधरे	शिष्यके अज्ञानका नाश करनेके लिये भगवत्सेवाके
हुए नहीं हैं, जिनमें स्वयं सद्गुण नहीं हैं, जो स्वयं किसी	भावसे ही गुरुपदको स्वीकार करते हैं, जो गुरु बनकर
विषयके अनुभवी नहीं हैं, वे यदि उपदेशकका बाना	भी परम ज्ञान-दानके द्वारा भगवत्स्वरूप शिष्यकी सेवा
धारणकर किसी स्वार्थसे या दम्भसे सुधारका और	ही करना चाहते हैं, ऐसे गुरु ही शिष्यका भवबन्ध
सद्गुणोंका उपदेश करते हैं अथवा बिना अनुभव किये	काटनेमें समर्थ होते हैं। जो अपने शरीरकी सेवा कराना
विषयमें अपनी दक्षता प्रकट करते हैं तो समाजके प्रति	चाहते हैं, शिष्यके धनसे अपने लिये विलाससामग्रीका
अपराध करते हैं। अवश्य ही साधकोंका परस्पर हरिचर्चा	संग्रह करनेकी इच्छा रखते हैं, एवं मान और पूजाके
करना, कथावाचकोंका कथा कहना, मित्रमण्डलीमें सत्-	लिये ही गुरुका पद ग्रहण करते हैं, उन गुरुओंसे
चर्चा करना, स्कूलके अध्यापकोंका बच्चोंके प्रति उपदेश	भवबन्धका छेदन नहीं हो सकता। और न उनके लिये
करना आदि इस अपराधमें नहीं गिने जा सकते, तथापि	ये शब्द ही हैं।
यहाँ भी इतनी बात तो है ही कि उपदेशके साथ आचरण	शिष्यकी श्रद्धाके प्रतापसे कहीं–कहीं अयोग्य
होता तो उसका परिणाम कुछ विलक्षण ही होता।	गुरुसे भी लाभ हो जाता है, परंतु इसमें शिष्यकी श्रद्धा
पारमार्थिक गुरुका आसन तो बहुत ही जिम्मेवारीका	ही कारण होती है, जिसके कारण वह उस लाभमें
पद है। इसमें तो मनुष्यके जीवनको लेकर खेलना है।	अपनी श्रद्धाको कारण न समझकर गुरुकृपाको ही
अनुभवी गुरुओंके अभावसे ही शिष्योंका पतन होता है।	कारण मानता है। परंतु गुरु बननेवालेको ऐसे अवसरोंपर
गुरुओंमें जैसा आचरण होता है, शिष्य उसीका अनुसरण	सावधान रहना चाहिये और शिष्यकी श्रद्धासे अनुचित
करते हैं। गुरु यदि विषयी होता है, कामी, क्रोधी या	लाभ उठानेकी चेष्टा करके अपनेको ठगना नहीं चाहिये।

सच्चे गुरुओंको विशेष उपदेश देनेकी आवश्यकता

नहीं होती, उनके आचरणसे ही शिक्षा मिल जाती है। यहाँतक कि उनके कृपालु हृदयमें शिष्यकी स्मृति हो

जानेमात्रसे ही कल्याण हो जाता है। इसीलिये सत् शिष्य साधक 'गुरो:कृपा हि केवलम्' मानते हैं। ऐसे गुरुओंको अज्ञात कृपासे चुपचाप शिष्यके हृदयमें शक्तिसंचार होकर उस शक्तिके प्रतापसे शिष्यका समस्त संशय नष्ट हो जाता है। यों अदृश्यरूपमें गुरु-शक्तिकी क्रिया चलती रहती है। यद्यपि गुरुकृत मौखिक उपदेशकी सार्थकता है, और साधारणतया उसकी आवश्यकता भी बहुत है, परंतु यह याद रखना चाहिये कि वाणीकी अपेक्षा संकल्पकी शक्ति कहीं अधिक है। और एक बात यह

भी है कि कुछ बहुत ऊँची स्थितिपर पहुँचे हुए महान् पुरुषोंको छोड़कर अन्य लोगोंकी, जो वाणीका बहुत अधिक प्रयोग करते हैं, पवित्र संकल्पशक्तिका ह्रास भी हो जाता है। इसलिये बहुत-से सत्पुरुष यथासाध्य बहुत ही कम बोला करते हैं। (यद्यपि यह नियम नहीं है) ऐसे संकल्पशक्तिसम्पन्न महात्मा यदि चाहें तो मुँहसे एक शब्द भी न बोलकर केवल अपनी कल्याणमयी दृष्टिसे, आभ्यन्तरिक स्वाभाविकी शुभ भावनासे, अथवा संकल्पशक्तिके प्रभावसे शिष्यका अशेष कल्याण कर सकते हैं। और यह जाना गया है कि ऐसे महापुरुषगण

शिष्यकी मानसिक स्थिति देखकर, उसकी धारणाके योग्य पात्रताका अनुभवकर धीरे-धीरे चुपचाप उसमें यथायोग्य शक्ति-संचार करते हुए उसकी मानसिक स्थिति और धारणा भूमिको क्रमशः उच्चसे उच्चतर अवस्थामें पहुँचाते रहते हैं और जब देखते हैं, कि यह शक्तिको पूर्णतया धारण करनेयोग्य हो गया, तब उसमें शक्तिका पूरा संचारकर क्षणमात्रमें ही दिव्य प्रकाशकी ज्योतिसे उसका अनादिकालीन अज्ञानान्धकार हर लेते हैं। यों बिना ही उपदेशके उसका जीवन धन्य और कृतकृत्य हो जाता है! इसीसे यह कहा गया है-

गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः॥ 'क्या ही आश्चर्य है, पवित्र वटवृक्षके नीचे वृद्ध

चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धाः शिष्या गुरुर्युवा।

शिष्य और युवा गुरु विराजमान हैं। गुरुका मौन-व्याख्यान हो रहा है और उसीसे शिष्योंका संशय कट गया है।' वस्तुतः आत्माराम महापुरुषमें आत्माकी दृष्टिसे

बाल, युवा या वृद्ध किसी अवस्थाका होना सम्भव नहीं।

आत्मा नित्य ही युवा है; क्योंकि वह एकरस है। ऐसे

गुरुके समीप आनेवाले अनादिकालसे प्रकृतिके प्रवाहमें पड़े हुए जीवरूप शिष्योंका अत्यन्त वृद्ध होना भी उचित है। परंतु जो ऐसे गुरुके सामने आ गया और जिसको ऐसे गुरुने शिष्य स्वीकार कर लिया, उसके अज्ञानका नाश हो ही गया समझना चाहिये; क्योंकि ऐसे महापुरुषोंका किसीको स्वीकार कर लेना निश्चय ही अमोघ होता है।

दर्शन और गुरुरूपसे वरण करनेकी प्रबल इच्छा हो उन्हें भगवान्के सामने कातर भावसे रोना चाहिये। भगवान्की कृपा होनेपर उनकी प्रेरणासे ऐसे महात्मा आप ही आकर मिल जायँगे, अथवा स्वयं भगवान् ही गुरुरूपसे प्रकट

होकर ऐसे शिष्यका उद्धार कर देंगे।

परन्तु आजके जमानेमें जहाँ गली-गली उपदेशक

और गुरु मिलते हैं, ऐसे सद्गुरु महात्माओंका प्राप्त होना

बहुत ही कठिन है। ऐसे महात्मा भगवत्कृपासे ही प्राप्त

होते हैं। अतएव जिनको इस प्रकारके महात्माओंके

भक्तको दुःख नहीं होता संख्या ५ ] भक्तको दुःख नहीं होता ( संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल ) निदयाके पण्डित श्रीवास गौरांगके बडे भक्त थे, गौरांग ब्राह्मणीने पतिके वचन मानकर दुःसह पुत्रशोकके महाप्रभु बीच-बीचमें श्रीवासके घरपर कीर्तन करने जाते। आँसुओंको किसी तरह रोक लिया और दूसरी स्त्रियोंके इसी तरह एक दिन कीर्तनके लिये गौरांग उनके घर गये। साथ वह पुत्रकी लाशके पास बैठकर हरिनाम-चिन्तन श्रीवासके आँगनमें सैकड़ों भक्त आनन्दमें विभोर हुए कीर्तन करने लगी। धन्य! कर रहे थे, गौरांगको देखकर भक्तोंके आनन्दकी मात्रा सीमाको श्रीवास पुत्रके शवको जमीनपर लिटाकर प्रफुल्लित पहुँच गयी, उनका बाह्यज्ञान जाता रहा। श्रीवासके आनन्दकी मन और खिले हुए मुखकमलसे बाहर लौट आये और तो कोई सीमा नहीं है; क्योंकि उसीके आँगनमें हरिसंकीर्तन दोनों भुजा उठाकर 'हरि बोल-हरि बोल' की तुमुल हो रहा है। इतनेमें ही भीतरसे एक दासी घबराती हुई ध्विन करके नाचने लगे। किसीको भी इस घटनाका पता आयी और श्रीवासको बुलाकर अन्दर ले गयी! नहीं लगा। इस समय रातके आठ बजे थे। नृत्य-कीर्तनमें श्रीवासका इकलौता बालक पुत्र बीमार है, बीमारी ढाई पहर रात बीत गयी। किसी तरह एक भक्तको यह बढ़ गयी है, घरमें बालककी माता और अन्यान्य स्त्रियाँ बात मालूम हो गयी, उसने दूसरेसे कहा, क्रमश: बात बालककी सेवामें लगी हुई थीं और श्रीवास निश्चिन्त मनसे फैल गयी, जो सुनता वही नाचना छोड़कर श्रीवासकी ओर देखने लगता। श्रीवास उसी महानन्दमें नाच रहे हैं। बाहर नाच रहे थे। उनको मरणासन्न पुत्रकी कोई चिन्ता श्रीवासने दिखला दिया कि भक्तको सांसारिक पदार्थोंके नहीं है, वे जानते हैं कि प्रभु जो कुछ करते हैं, हमारे मंगलके लिये करते हैं। जो सब जीवोंकी एकमात्र गति हैं, नाश हो जानेसे कोई दु:ख नहीं होता। वह जिस उन्हींका नाम-संकीर्तन हो रहा है और भक्तगण आनन्दमें आनन्द-सिन्धुमें निमग्न रहता है, उसके सामने जगत्का डूबे हुए नृत्य कर रहे हैं, इस आनन्दमें चिन्ता कैसी? बड़े-से-बड़ा दु:ख भी तुच्छ-नगण्य प्रतीत होता है 'यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते।' दासीके साथ श्रीवासने अन्दर पहुँचकर देखा, बालकका अन्तसमय उपस्थित है, पिताने बड़े प्रेमसे भक्तोंकी दृष्टिमें जगत् भगवान्की लीलामात्र है, बाजीगरके नित्य साथी—उसकी प्रत्येक क्रीडा़का मर्म भगवानुका तारकब्रह्म मन्त्र उसे सुनाया। पुत्रको मृत्युमुखमें समझनेवाले टहलुएकी भाँति वे भगवानुकी सभी लीलाओंमें जाते देखकर उसकी माता तथा दूसरी स्त्रियोंकी आँखोंसे आँसू बहने लगे। श्रीवासने कहा, 'जिसके नाम श्रवणमात्रसे हर्षित होते हैं, मृत्यु उनकी दृष्टिमें कोई पदार्थ ही नहीं महापापी भी परमधामको चला जाता है, वही स्वयं है। इसी सुखमें आज श्रीवासका नृत्य भी बन्द नहीं भगवान् आज तुम्हारे ऑंगनमें नाच रहे हैं, इस पुत्रके हुआ, परंतु भक्तोंमें इस बातके फैल जानेसे उन्होंने कीर्तन सौभाग्यके लिये ब्रह्मातक तरसते हैं, यदि पुत्रपर तुम्हारा रोक दिया, मृदंग और करतालकी ध्वनि बन्द हो गयी। वास्तविक स्नेह है तो उसकी ऐसी दुर्लभ मृत्युके लिये महाप्रभु गौरांगदेवको भी बाह्यज्ञान हो गया,वे भक्तोंकी ओर देखकर कहने लगे, 'भाइयो! क्या हुआ? मेरे आनन्द मनाओ, वह बड़ी ही शुभ घड़ीमें जन्मा था, तभी तो आज भगवानुके सामने उसका नामकीर्तन सुनते-सुनते हृदयमें रोना क्यों आता है ?' फिर श्रीवासकी तरफ मुख इसने प्राण त्याग किये हैं। मेरा मन तो आज आनन्दसे फिराकर प्रभु बोले, 'पण्डित! तुम्हारे घरमें कोई दुर्घटना उछल रहा है। यदि तुम लोग किसी तरह अपने मनको तो नहीं हो गयी? मेरे प्राण क्यों रो रहे हैं?' श्रीवासने शान्त कर सकतीं तो कम-से-कम जबतक कीर्तन होता मुसकराते हुए कहा, 'प्रभो! जहाँ आप उपस्थित हैं, वहाँ है, तबतक तो चुपचाप रहो। कहीं बीचमें रो उठोगी तो दुर्घटना क्यों होने लगी?' प्रभुने इस बातपर विश्वास कीर्तन भंग हो जायगा।' नहीं किया, वे भक्तोंसे पूछने लगे। पर किसीसे भी

सहजमें यह दु:खद संवाद कहते नहीं बना। अन्तमें एक संचार हो गया. बालक बोलने लगा। इस आश्चर्यमयी

∙जीवन–दर्शन-

गये हैं।' यह सुनकर श्रीगौरांग श्रीवासकी ओर देखने भगवच्चरणोंमें मेरी मित हो।' इसके बाद ही शरीर पुनः लगे, श्रीवासका मुख महान् आनन्दसे प्रफुल्लित हो रहा निर्जीव हो गया! पुत्रकी बोली सुनकर माताका शोक कुछ कम

है, महाप्रभु श्रीवासका यह भाव देखकर बहुत प्रसन्न

भक्तने कहा, 'प्रभो! श्रीवासका पुत्र जाता रहा।' प्रभुने

कहा 'कब? कितनी देर हुई?' भक्तोंने कहा, 'रातको

आठ बजे यह घटना हुई थी, इस समय करीब दो बज

हुए, उन्होंने कहा— 'धन्य धन्य श्रीवास! आज तुमने श्रीकृष्णको

खरीद लिया।' महाप्रभुका हृदय द्रवित हो गया, नेत्रोंसे अश्रुधारा

बहने लगी, प्रभुकी आँखोंमें आँसू देखकर श्रीवासने

कहा, 'प्रभो! मैं पुत्रशोक सहन कर सकता हूँ, परंतु आपके नेत्रोंमें जल नहीं देख सकता, आप शान्त हों, मुझे कोई

दु:ख नहीं है-दु:खकी सम्भावना भी नहीं है।' भक्तोंने मृत बालककी लाशको बाहर आँगनमें

सुला दिया, महाप्रभु उसके पास जाकर उससे जीवितकी

तरह पूछने लगे, प्रभुके प्रश्न करते ही मृतदेहमें प्राणोंका

एमरसन अमेरिकाके महान् दार्शनिक और विचारक थे। वे अपने समयके बहुत बड़े तत्त्वज्ञ थे। उनका

सम्पूर्ण जीवन अन्तरात्मा-परमात्माके चरणोंपर समर्पित था। वे कहा करते थे कि परमात्मासे ही सम्बन्ध रखना चाहिये। उनके चिन्तनसे जीवन अमृतमय हो उठता है। संसारकी वस्तुएँ नश्वर और क्षणभंगुर हैं। इनका विश्वास नहीं करना चाहिये।

एक दिन वे एकान्तमें बैठकर ईश्वरका चिन्तन कर रहे थे कि अचानक एक मित्रने उनकी परीक्षा ली। मित्रने अपने-आपको विशेष चिन्तासे संतप्त प्रकट किया।

'कुछ कहोगे भी कि क्या बात है। तुम्हारी चिन्ताका कारण मैं भी तो जानूँ।' एमरसन अपने मित्रकी ओर देखने लगे।

ही सम्पूर्ण संसार कालके गालमें समा जायगा। प्रलय उपस्थित है।' मित्र विस्मित था। एमसरनके मनमें आनन्द थिरक उठा। वे इस समाचारसे बहुत प्रसन्न दीख पड़े। 'मित्र! आपने बड़ी अच्छी बात बतायी। इससे बढ़कर शुभ समाचार दूसरा हो ही क्या सकता है? इस

'भाई! कुछ मत पूछो। हमलोगोंके भाग्यमें ऐसा ही होना था। क्या आप जानते नहीं हैं कि आज रातको

संसारके बिना भी मनुष्य बड़े आराम और सुखसे रह सकता है। ईश्वरीय राज्य आयेगा और मनुष्य अपने

क्षणभंगुर जीवनमें सच्ची शान्ति और वास्तविक सत्यका अनुभव करेगा।' एमरसनने धन्यवाद दिया, वे

निभिन्नसर्ति। MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

सबका शोक-दु:ख जाता रहा।

प्रभुके इन वचनोंसे श्रीवास और उनकी पत्नीका हृदय आनन्दसे भर गया। वे गद्गद होकर हरिध्वनि करने लगे। भक्तगण मृतदेहको संस्कारके लिये ले गये।

घटनासे सभी लोग चिकत हो गये। बालकने कहा.

'प्रभो! इस जगतुमें मेरा काम पूरा हो गया, अब मैं इससे बहुत अच्छी जगह जा रहा हूँ, आप कृपा करें, जिससे

क्लेशसे मुक्त हो। पर यह न समझो कि तुम्हारा पुत्र जाता रहा है, उस एकके बदलेमें श्रीनित्यानन्द और मुझको दोनोंको तुम अपने पुत्र समझो!'

दूसरे लोग इससे कठिन नियमोंको क्लेशसे सहते हैं, तुम

हुआ, महाप्रभुके समझानेसे सभी शोक भूल गये। प्रभु

भाग ९१

कहने लगे, 'श्रीवास! जब संसारमें आये हो, तब तुम्हें भी सांसारिक नियमोंके अधीन ही रहना होगा। परंतु

साधकोंके प्रति— संख्या ५ ] साधकोंके प्रति— [दुढ़ निश्चयकी महिमा] ( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज ) मैंने सन्तोंसे सुना है कि 'परमात्मा हैं'—ऐसा दृढ़ सब संसार प्रतिक्षण अभावमें जा रहा है। जितना जन्म है, वह प्रतिक्षण मृत्युमें जा रहा है। जितना सर्ग है, वह निश्चय हो जाय तो अपने-आपको जनानेकी जिम्मेदारी भगवान्पर आ जाती है। हम भगवान्को अपने उद्योगसे प्रतिक्षण प्रलयमें जा रहा है। जितना महासर्ग है, वह नहीं जान सकते, पर 'भगवान् सब जगह हैं'—यह दृढ़ प्रतिक्षण महाप्रलयमें जा रहा है। भाव होनेपर भगवान् खुद अपने-आपको जना देते हैं। इस संसारको नाशवान् कहते हैं। जैसे धनके भगवान् सब जगह हैं—यह बात हमें जँची हुई है कारण मनुष्य धनवान् कहलाता है। अगर धन नहीं हो ही, फिर इसमें कमी क्या है ? इसमें एक बातकी कमी तो वह धनवान् नहीं कहलाता, ऐसे ही संसार नाशवान् है कि हम जानते हैं कि यह संसार पहले ऐसा नहीं था कहलाता है तो इसमें नाशके सिवाय कुछ नहीं है, नाश-और फिर ऐसा नहीं रहेगा तथा अभी भी हरदम बदल ही-नाश है। अगर 'परमात्मा हैं'—यह दृढ़ निश्चय हो रहा है, फिर भी संसारको 'है' मान लेते हैं अर्थात् अपने जाय तो जो 'नहीं' को 'है' माना है, वह आड़ हट इस अनुभवका निरादर करते हैं। इस कारण 'परमात्मा जायगी और परमात्मा प्रकट हो जायँगे! कारण कि परमात्मा तो हैं ही, उनका कभी अभाव नहीं होता। हैं'—इस मान्यताकी दृढ़तामें कमी आ रही है। इसलिये अपने अनुभवका आदर करें। परमात्मा सब जगह होनेसे यहाँ भी हैं, सब समयमें जैसे, जबतक नींद नहीं आती, तबतक स्वप्न नहीं होनेसे अभी भी हैं, सबमें होनेसे अपनेमें भी हैं और आता और नींद खुलनेके बाद भी स्वप्न नहीं रहता, बीचमें सबके होनेसे हमारे भी हैं। उनका अभाव कभी हो नहीं (नींदमें) स्वप्न आता है। बीचमें भी आप उसको सच्चा सकता, कभी हुआ नहीं, जब कि संसारमात्रका अभाव मान लेते हो, नहीं तो वह है ही नहीं। इसी तरह संसारको प्रतिक्षण हो रहा है। दो ही तो चीजें हैं-परमात्मा और मान लें कि यह संसार, शरीर पहले भी नहीं थे, पीछे संसार। परमात्माका तो अभाव नहीं हो सकता और भी नहीं रहेंगे, बीचमें भी केवल दीखते हैं, वास्तवमें हैं संसारका भाव नहीं हो सकता—ऐसा यथार्थ दृष्टिसे नहीं। अब कोई कहे कि संसार, शरीर आदि प्रत्यक्ष दीखते दृढ़तापूर्वक जानते ही संसारकी जगह परमात्मा दीखने हैं, इनको 'नहीं' कैसे मानें? तो भाई! स्वप्न दीखनेमें लग जायँगे। अभी भी परमात्मा ही दीखते हैं; क्योंकि कम सच्चा थोडे ही दीखता था। जब दीखता था, तब संसारकी तो सत्ता ही नहीं है। परमात्माकी सत्तासे ही ठीक सच्चा ही दीखता था, परंतु जगनेपर स्वप्न नहीं यह संसार सत्य दीख रहा है। इसमें सत्य तो एक दीखता। इससे सिद्ध हुआ कि वह था ही नहीं। आजसे परमात्मा ही हैं। तो फिर यह संसार सत्य क्यों दीखता सौ वर्ष पहले ये शरीर थे क्या? और सौ वर्षके बाद है ? 'जासु सत्यता तें जड़ माया। भास सत्य इव मोह ये शरीर रहेंगे क्या ? हरेक आदमी मान लेगा कि बिलकुल सहाया॥' (रा०च०मा० १।११७।८) मूर्खतासे ही नहीं रहेंगे। 'आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेऽपि तत्तथा' यह संसार सत्य दीखता है। जो जानता है, पर मानता अर्थात् जो आदि और अन्तमें नहीं होता, वह वर्तमानमें नहीं, उसे मूर्ख कहते हैं। जानता है कि यह संसार भी नहीं होता। इस दृष्टिसे यह सब-का-सब निरन्तर नाशवान् है फिर भी इसको स्थिर मानता है—यही 'नहीं' में भरती हो रहा है। जितनी उम्र बीत गयी, उतनी मूर्खता है। हम जितना जानते हैं, उतना मान लें तो तो 'नहीं' में भरती हो ही गयी। अब जितनी उम्र बाकी मूर्खता नहीं रहेगी और हम निहाल हो जायँगे। रही, वह भी प्रतिक्षण 'नहीं' में भरती हो रही है। यह परमात्माको तो मान लें और संसारको जान लें।

भाग ९१ परमात्माको कैसे मानें? कि परमात्मा तो हैं: और नाशवान् है'-यह प्रत्यक्ष है। संसारको ठीक जान लो संसारको कैसे जानें ? कि संसार नहीं है। संसारको ठीक तो परमात्मा प्रकट हो जायँगे, इतनी-सी बात है। थोडी जान लेनेपर परमात्मा प्रकट हो जाते हैं। 'यह बात ठीक देर बैठकर इस बातको जमा लो कि बाहर-भीतर ऊपर-दीखती है, तो फिर जँचती क्यों नहीं?' इसमें कारण यह नीचे सब जगह परमात्मा ही हैं। जैसे समुद्रमें गोता है कि संसारसे सुख लेते हो। जबतक सांसारिक सुखका लगानेपर चारों तरफ जल-ही-जल है, ऐसे ही सब लोभ रहेगा, तबतक यह 'संसार नाशवान् है, असत्य जगह परमात्मा-ही-परमात्मा हैं। संसार तो बेचारा यों है'-ऐसा कहनेपर भी दीखेगा नहीं। ही नष्ट हो रहा है! काला भौंरा बाँसमें छेद करके रहता है। बाँस प्रश्न यह है कि संसारका सुख लेना कैसे मिटे? कितना कडा होता है, पर भौरेके दाँत इतने कठोर होते तो इसको अपनी कच्चाई समझें तो यह मिट जायगा। हैं कि उसमें भी गोल-गोल छेद कर देता है! परंतु जब इसको तो आप मिटायेंगे, तभी मिटेगा। दूसरा नहीं मिटा वह कमलके भीतर बैठता है, तब रातमें कमलके बन्द सकता। अत: आप अपना पूरा बल लगायें। फिर भी न होनेपर भी वह उसे काटकर बाहर नहीं जाता। वह मिटे तो 'हे नाथ! हे नाथ!' कहकर भगवान्को पुकारें। यह नियम है कि जब आदमी निर्बल हो जाता है, तब सोचता है कि रात चली जायगी, प्रभात हो जायगा, वह सबलका सहारा लेता ही है। एक तो सांसारिक सूर्यका उदय हो जायगा, तब कमल खिल जायगा और सुखासिकको मिटानेकी चाहना नहीं है और एक हम उस समय मैं उड जाऊँगा। वह बाँसमें छेद कर देता है, पर कमलकी पंखुडी उससे नहीं कटती। क्या वह इतना उसको मिटाते नहीं हैं, ये दो बाधाएँ हैं। ये दोनों बाधाएँ कमजोर है ? वह उस कमलसे सुख लेता है, इसलिये हट जायँ, फिर भी सुखासिक न मिटे तो उस समय आप कमजोर हो जाता है! ऐसे ही यह मनुष्य संसारसे सुख स्वतः परमात्माको पुकार उठोगे। बालककी भी मनचाही लेता है, इसलिये यह कमजोर हो जाता है। बीकानेरकी नहीं होती तो वह रो पड़ता है और रोनेसे सब काम हो जाता है। ऐसे ही सज्जनो! उस प्रभुके आगे रो पडो तो बोलीमें एक बात आती है—'रांडरा काचा' अर्थात् स्त्रीके आगे बिलकुल कच्चा, स्त्रीका गुलाम। इस सब काम हो जायगा। वे प्रभु सर्वथा सबल हैं। उनके रहते हम दु:ख क्यों पायें? भगवान् हमारे हैं। बालक संसाररूपी स्त्रीके आगे यह मनुष्य कच्चा, कमजोर हो कहता है कि माँ मेरी है, तो माँको उसे गोदमें लेना जाता है। कच्चापन क्या है? संसारसे सुख लेता है, यही पडेगा। वह तो केवल एक जन्मकी माँ है; परंतु वे प्रभू कच्चापन है। इस कच्चापनको दूर करना है। 'परमात्मा हैं'—यह तो मान्यता है और 'संसार सदाकी और सबकी माँ हैं। शिवसे विनय SA CA A ( श्रीचन्द्रशेखरजी शक्ल ) हमको लो शंकर॥ कर लो शंकर॥ क्रम अस अस अस अस अस अस अस जनम-जनम के। तिलमात्र शेष अब। इसकी हामी लो शंकर॥ दोष लो शंकर॥ भर लो हमको शंकर॥ हमको लो शंकर॥ कर अपना कर अपना बीच कबहँ। भवसिन्ध निकलो नहीं निकाले हम। शंकर॥ । 'शुक्ल' बाँह लो हिये कर घर लो शंकर॥ हमारी धर [प्रेषक—श्रीरविन्द्रजी अग्रवाल]

महाभारतोक्त शतरुद्रियस्तोत्र [वैदिक शिवोपासनामें वेदोक्त शतरुद्रियका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। शतरुद्रिय चारों वेदोंमें भिन्न-

महाभारतोक्त शतरुद्रियस्तोत्र

भिन्न रूपोंमें प्राप्त होते हैं। शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टाध्यायीका मुख्य भाग शतरुद्रिय ही है, जो उसमें पंचम

संख्या ५ ]

अध्यायके रूपमें विन्यस्त है। वस्तुत: माध्यन्दिनशाखीय शुक्ल यजुर्वेदका यह १६वाँ अध्याय है। इसे रुद्रसूक्त

अथवा नीलसूक्त भी कहते हैं। इसमें भगवान् शिवकी शताधिक नामोंसे स्तुति की गयी है। उपर्युक्त वैदिक

शतरुद्रियका अपरिमित एवं अमोघ माहात्म्य है, परंतु शास्त्रानुसार जिनका वैदिक पूजनमें अधिकार नहीं है,

भी एकाधिक स्थलोंपर उक्त ग्रन्थोंमें दिये गये हैं। उनका महत्त्व किसी भी प्रकारसे न्यून नहीं है, यह उनकी

फलश्रुतिसे स्पष्ट हो जाता है। एक पौराणिक शतरुद्रियस्तोत्र स्कन्दपुराणके माहेश्वरखण्डके कुमारिका उपखण्डके अन्तर्गत प्राप्त होता है, दूसरा महाभारतके द्रोणपर्व के अन्तर्गत दो अध्यायोंमें विन्यस्त है। अन्यान्य पुराणोंमें भी ऐसे स्तोत्रोंका अनुसन्धान किया जा सकता है। महाभारतोक्त शतरुद्रियका उपदेश पाण्डुपुत्र अर्जुनको स्वयं महर्षि वेदव्यासने दिया था, जिसका भिक्तभावसे सभी पाठ कर सकते हैं, उसी महाभारतोक्त

उनके लिये भी इतिहास-पुराणग्रन्थोंमें अनेक वैकल्पिक साधन बताये गये हैं। उसी क्रममें पौराणिक शतरुद्रिय

- रुद्राय
- कपर्दिने हर्यक्षवरदाय करालाय च॥१॥
- काम्याय च॥२॥
- कृशायोत्तारणाय हरिकेशाय मुण्डाय च।
- सुतीर्थाय भास्कराय देवदेवाय रंहसे॥ ३॥
- उष्णीषिणे मीढुषे॥४॥ सुवक्त्राय सहस्त्राक्षाय
- उग्राय पतये दिशाम्॥५॥ हिरण्यबाहवे राजे

शतरुद्रियको यहाँ सानुवाद प्रस्तुत किया जा रहा है—सम्पादक]

- - सूर्यस्वरूप, उत्तम तीर्थ और अत्यन्त वेगशाली हैं, उन देवाधिदेव महादेवको नमस्कार है॥ २-३॥
- कनिष्ठाय सुवर्चसे। शितिकण्ठाय
- याम्यायाव्यक्तकेशाय सदवृत्ते शङ्कराय च।
  - हरिनेत्राय स्थाणवे पुरुषाय
- सर्वाय बहुरूपाय प्रियाय प्रियवाससे।
- चीरवाससे। गिरिशाय प्रशान्ताय यतये

भगवान् शंकरको नमस्कार है॥४॥

- चीरवस्त्रधारी, हिरण्यबाहु (सोनेके आभूषणोंसे विभूषित
- दिशाओंके अधिपति हैं, [उन भगवान् शङ्करको नमस्कार

जो पर्वतपर शयन करनेवाले, परम शान्त, यतिस्वरूप,

जो रुद्र, नीलकण्ठ, कनिष्ठ (सूक्ष्म या दीप्तिमान्),

जो यमके अनुकूल रहनेवाले काल हैं, अव्यक्त

जो अनेक रूप धारण करनेवाले, सर्वस्वरूप तथा

सबके प्रिय हैं. वल्कल आदि वस्त्र जिन्हें प्रिय हैं. जो

मस्तकपर पगडी धारण करते हैं, जिनका मुख सुन्दर है,

जिनके सहस्रों नेत्र हैं तथा जो वर्षा करनेवाले हैं, उन

उत्तम तेजसे सम्पन्न, जटाजूटधारी, विकरालस्वरूप, पिंगल नेत्रवाले कुबेरको वर देनेवाले हैं, उन भगवान्

स्वरूप आकाश ही जिनका केश है, जो सदाचारसम्पन्न, सबका कल्याण करनेवाले, कमनीय, पिंगलनेत्र, सदा स्थित रहनेवाले और अन्तर्यामी पुरुष हैं, जिनके केश भूरे एवं पिंगल वर्णके हैं, जिनका मस्तक मुण्डित है, जो दुबले-पतले और भवसागरसे पार उतारनेवाले हैं, जो

शिवको नमस्कार है॥१॥

- है]॥५॥
- बाँहवाले), राजा (दीप्तिमान्), उग्र (भयंकर) तथा

भाग ९१ जो मेघोंके अधिपति तथा सम्पूर्ण भूतोंके स्वामी हैं, पर्जन्यपतये चैव भूतानां पतये नमः। वृक्षाणां पतये चैव गवां पतये च नमः ॥ ६ ॥ उन्हें नमस्कार है। वृक्षोंके पालक और गौओंके अधिपतिरूप आपको नमस्कार है॥६॥ जिनका शरीर वृक्षोंसे आच्छादित है, जो सेनाके वृक्षैरावृतकायाय सेनान्ये मध्यमाय च। अधिपति और शरीरके मध्यवर्ती (अन्तर्यामी) हैं, यजमान-स्रुवहस्ताय देवाय धन्विने भार्गवाय च॥७॥ रूपसे जो अपने हाथमें स्नुवा धारण करते हैं, जो दिव्यस्वरूप, धनुर्धर और भृगुवंशी परशुरामस्वरूप हैं, उनको नमस्कार है॥७॥ मुञ्जवाससे। बहुरूपाय विश्वस्य पतये सहस्त्रशिरसे जिनके बहुत-से रूप हैं, जो इस विश्वके पालक चैव सहस्रनयनाय च॥८॥ होकर भी मूँजका कौपीन धारण करते हैं, जिनके सहस्रों सिर, सहस्रों नेत्र, सहस्रों भुजाएँ और सहस्रों पैर हैं, उन सहस्त्रबाहवे भगवान् शङ्करको नमस्कार है॥८१/२॥ भुवनेश्वरम् ॥ ९ ॥ शरणं कौन्तेय वरदं कुन्तीनन्दन! तुम उन्हीं वरदायक, भुवनेश्वर, उमावल्लभ, त्रिनेत्रधारी, दक्षयज्ञविनाशक, प्रजापति, व्यग्रतारहित और अविनाशी भगवान् भूतनाथकी शरणमें उमापतिं विरूपाक्षं दक्षयज्ञनिबर्हणम्। जाओ॥ ९-१०॥ भूतानां पतिमव्ययम् ॥ १० ॥ पतिमव्यग्रं प्रजानां जो जटाजूटधारी हैं, जिनका घूमना परम श्रेष्ठ है, जो श्रेष्ठ नाभिसे सुशोभित, ध्वजापर वृषभका चिह्न धारण कपर्दिनं वृषावर्तं वृषनाभं वृषध्वजम्। करनेवाले, वृषद्र्प (प्रबल अहंकारवाले), वृषपति वृषर्षभम्॥ ११॥ वृषदर्पं वृषपतिं वृषशृङ्गं (धर्मस्वरूप वृषभके अधिपति), धर्मको ही उच्चतम माननेवाले तथा धर्मसे भी सर्वश्रेष्ठ हैं, जिनके ध्वजमें साँडका चिह्न अंकित है, जो धर्मात्माओंमें उदार, धर्मस्वरूप, वृषभके वृषभोदारं वृषभेक्षणम्। वृषाङ्कं वृषभं समान विशाल नेत्रोंवाले, श्रेष्ठ आयुध और श्रेष्ठ बाणसे वृषेश्वरम् ॥ १२ ॥ वृषायुधं वृषशरं वृषभूतं युक्त, धर्मविग्रह तथा धर्मके ईश्वर हैं, [उन भगवान्की मैं शरण ग्रहण करता हूँ]॥ ११-१२॥ महोदरं द्वीपिचर्मनिवासिनम्। कोटि-कोटि ब्रह्माण्डोंको धारण करनेके कारण जिनका महाकायं ब्रह्मण्यं ब्राह्मणप्रियम्॥ १३॥ लोकेशं वरदं मण्डं उदर और शरीर विशाल है, जो व्याघ्रचर्म ओढा करते हैं, जो लोकेश्वर, वरदायक, मुण्डितमस्तक, ब्राह्मणहितैषी तथा ब्राह्मणोंके प्रिय हैं। जिनके हाथमें त्रिशूल, ढाल, खड्गचर्मधरं त्रिशूलपाणिं प्रभुम्। वरदं तलवार और पिनाक आदि अस्त्र शोभा पाते हैं, जो वरदायक, लोकानां पतिमीश्वरम्॥ १४॥ खड्गधरं पिनाकिनं प्रभु, सुन्दर शरीरधारी, तीनों लोकोंके स्वामी तथा साक्षात् ईश्वर हैं, उन चीरवस्त्रधारी, शरणागतवत्सल भगवान <del>ӆӇ</del>҉пdѡ<del>҉ӷ҉҇ӆ</del> Discard Şеӷѵ҉ҽr h<del>ttps://ˌdsc</del>rgg/dha<del>rṃaᡵ</del>┤ ᢥᠰᡧᡕᢄᡧᠰᠮᡶᠰ᠙ݤѴĘ᠙ӼҲ┪vinash/Sha

संख्या ५] महाभारतोक्त	
**************************************	**************************************
नमस्तस्मै सुरेशाय यस्य वैश्रवणः सखा॥१५॥	कुबेर जिनके सखा हैं, उन देवेश्वर शिवको
	नमस्कार है। प्रभो! आप उत्तम वस्त्र, उत्तम व्रत और
सुवाससे नमस्तुभ्यं सुव्रताय सुधन्विने।	उत्तम धनुष धारण करते हैं। आप धनुर्धर देवताको धनुष
धनुर्धराय देवाय प्रियधन्वाय धन्विने ॥ १६ ॥	प्रिय है, आप धन्वी, धन्वन्तर, धनुष और धन्वाचार्य हैं,
	आपको नमस्कार है। भयंकर आयुध धारण करनेवाले
धन्वन्तराय धनुषे धन्वाचार्याय ते नमः।	सुरश्रेष्ठ महादेवजीको नमस्कार है॥१५—१७॥
उग्रायुधाय देवाय नमः सुरवराय च॥१७॥	अनेक रूपधारी शिवको नमस्कार है, बहुत-से
	धनुष धारण करनेवाले रुद्रदेवको नमस्कार है, आप
नमोऽस्तु बहुरूपाय नमोऽस्तु बहुधन्विने।	स्थाणुरूप हैं, आपको नमस्कार है, उन तपस्वी शिवको
नमोऽस्तु स्थाणवे नित्यं नमस्तस्मै तपस्विने॥१८॥	नित्य नमस्कार है॥ १८॥
नमोऽस्तु त्रिपुरघ्नाय भगघ्नाय च वै नमः।	त्रिपुरनाशक और भगनेत्रविनाशक भगवान् शिवको
नमाउस्तु ।त्रपुरमाय मगमाय य प नमः। वनस्पतीनां पतये नराणां पतये नमः॥१९॥	बारम्बार नमस्कार है। वनस्पतियोंके पति तथा नरपति–
वनस्वताना पतव नराणा पतव नमः॥ १९॥	रूप महादेवजीको नमस्कार है॥ १९॥
मातृणां पतये चैव गणानां पतये नमः।	मातृकाओंके अधिपति और गणोंके पालक शिवको
गवां च पतये नित्यं यज्ञानां पतये नमः॥ २०॥	नमस्कार है। गोपति और यज्ञपति शंकरको नित्य
	नमस्कार है॥ २०॥
अपां च पतये नित्यं देवानां पतये नमः।	जलपति तथा देवपतिको नित्य नमस्कार है। पूषाके
पूष्णो दन्तविनाशाय त्र्यक्षाय वरदाय च॥ २१॥	दाँत तोड़नेवाले, त्रिनेत्रधारी वरदायक शिवको नमस्कार
	है। नीलकण्ठ, पिंगलवर्ण और सुनहरे केशवाले भगवान्
नीलकण्ठाय पिङ्गाय स्वर्णकेशाय वै नमः।	शंकरको नमस्कार है॥ २१ <sup>१</sup> /२॥
स वै रुद्रः स च शिवःसोऽग्निः सर्वश्च सर्ववित्।	वे ही रुद्र हैं, वे ही शिव हैं, वे ही अग्नि हैं,
स चेन्द्रश्चैव वायुश्च सोऽश्विनौ च स विद्युतः॥ २२॥	वे ही सर्वस्वरूप एवं सर्वज्ञ हैं। वे ही इन्द्र और वायु
	हैं, वे ही दोनों अश्विनीकुमार तथा विद्युत् हैं॥२२॥
स भवः स च पर्जन्यो महादेवः सनातनः।	वे ही भव, वे ही मेघ और वे ही सनातन महादेव
स चन्द्रमाः स चेशानः स सूर्यो वरुणश्च सः॥२३॥	हैं। चन्द्रमा, ईशान, सूर्य और वरुण भी वे ही हैं॥ २३॥
	वे ही काल, अन्तक, मृत्यु, यम, रात्रि, दिन, मास,
स कालः सोऽन्तको मृत्युः स यमो रात्र्यहानि तु।	पक्ष, ऋतु, सन्ध्या और सम्वत्सर हैं॥ २४॥
मासार्धमासा ऋतवः सन्ध्ये संवत्सरश्च सः॥२४॥	वे ही धाता, विधाता, विश्वात्मा और विश्वरूपी
	कार्यके कर्ता हैं। वे शरीररहित होकर भी सम्पूर्ण
धाता च स विधाता च विश्वात्मा विश्वकर्मकृत्।	देवताओंके शरीर धारण करते हैं॥ २५॥
सर्वासां देवतानां च धारयत्यवपुर्वपुः॥ २५॥	सम्पूर्ण देवता सदा उनकी स्तुति करते हैं। वे
	महादेवजी एक होकर भी अनेक हैं। सौ, हजार और
सर्वदेवैः स्तुतो देवः सैकधा बहुधा च सः।	लाखों रूपोंमें वे ही विराज रहे हैं॥ २६॥
शतधा सहस्रधा चैव भूयः शतसहस्रधा॥२६॥	वेदज्ञ ब्राह्मण उनके दो शरीर मानते हैं, एक घोर
द्वे तनू तस्य देवस्य वेदज्ञा ब्राह्मणा विदुः।	और दूसरा शिव। ये दोनों पृथक्-पृथक् हैं और उन्हींसे
६ तर् तस्य दवस्य वदज्ञा ब्राह्मणा विदुः। घोरा चान्या शिवा चान्या ते तनू बहुधा पुनः॥२७॥	
नारा नान्ना ।राना नान्ना त तमू बहुवा पुनः॥ १७॥	1 3 1. 26 (1022) 11/11 X 21/10 61 21/11 6 11 10 11

२४ भाग ९१ घोरा तु या तनुस्तस्य सोऽग्निर्विष्णुः स भास्करः। उनका जो घोर शरीर है, वही अग्नि, विष्णु और सौम्या तु पुनरेवास्य आपो ज्योतींषि चन्द्रमाः॥ २८॥ सूर्य है और उनका सौम्य (शिव) शरीर ही जल, ग्रह, नक्षत्र और चन्द्रमा है॥ २८॥ वेद, वेदांग, उपनिषद्, पुराण और अध्यात्मशास्त्रके साङ्गोपनिषदः पुराणाध्यात्मनिश्चयाः। वेदाः जो सिद्धान्त हैं तथा उनमें भी जो परम रहस्य है, वह यदत्र परमं गुह्यं स वै देवो महेश्वरः॥२९॥ भगवान् महेश्वर ही हैं॥ २९॥ पार्थ! यह स्तोत्र वेदोंके समान परम पवित्र तथा धन, यश और आयुकी वृद्धि करनेवाला है॥३०॥ धन्यं यशस्यमायुष्यं पुण्यं वेदैश्च सम्मितम्॥ ३०॥ इसके पाठसे सम्पूर्ण मनोरथोंकी सिद्धि होती है। यह पवित्र स्तोत्र सम्पूर्ण किल्बिषोंका नाशक, सब पुण्यं सर्विकिल्बिषनाशनम्। सर्वार्थसाधनं पापोंका निवारक तथा सब प्रकारके दु:ख और भयको सर्वपापप्रशमनं सर्वदुःखभयापहम्॥ ३१॥ दूर करनेवाला है॥ ३१॥ जो मनुष्य भगवान् शंकरके ब्रह्मा, विष्णु, महेश और निर्गुण निराकार—इन चतुर्विध स्वरूपका प्रतिपादन चतुर्विधमिदं स्तोत्रं यः शृणोति नरः सदा। विजित्य शत्रून् सर्वान् स रुद्रलोके महीयते॥ ३२॥ करनेवाले इस स्तोत्रको सदा सुनता है, वह सम्पूर्ण शत्रुओंको जीतकर रुद्रलोकमें प्रतिष्ठित होता है॥ ३२॥ परमात्मा शिवका यह चरित सदा संग्राममें विजय चरितं महात्मनो नित्यं सांग्रामिकमिदं स्मृतम्। दिलानेवाला है, जो सदा उद्यत रहकर शतरुद्रियको शृणवंश्च सततोत्थितः॥ ३३॥ शतरुद्रीयं पठन् पढ़ता और सुनता है तथा मनुष्योंमें जो कोई भी निरन्तर भगवान् विश्वेश्वरका भिक्तभावसे भजन करता है, वह उन त्रिलोचनके प्रसन्न होनेपर समस्त उत्तम कामनाओंको भक्तो विश्वेश्वरं देवं मानुषेषु च यः सदा। वरान् कामान् स लभते प्रसन्ने त्र्यम्बके नरः॥ ३४॥ प्राप्त कर लेता है॥ ३३-३४॥ ॥ इति श्रीमहाभारते द्रोणपर्वणि व्यासप्रोक्तं शतरुद्रियस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥ ॥ इस प्रकार श्रीमहाभारतमें द्रोणपर्वके अन्तर्गत व्यासप्रोक्त शतरुद्रियस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

'को जाँचिये संभु तजि आन' को जाँचिये संभु तजि आन। दीनदयालु भगत-आरति-हर, सब प्रकार समस्थ भगवान॥ \* \* कालकूट-जुर जरत सुरासुर, निज पन लागि किये बिष पान। \* \* दारुन दनुज, जगत-दुखदायक, मारेउ त्रिपुर एक ही बान॥ \* \* जो गति अगम महामुनि दुर्लभ, कहत संत, श्रुति, सकल पुरान। \* सो गति मरन-काल अपने पुर, देत सदाशिव सबहिं समान॥ \* सेवत सुलभ, उदार कलपतरु, पारबती-पति परम सुजान। \* \* काम-रिपु राम-चरन-रति, तुलसिदास कहँ कृपानिधान॥ \* [विनय-पत्रिका]

परमात्माके साथ है हमारा नित्य सम्बन्ध संख्या ५ ] परमात्माके साथ है हमारा नित्य सम्बन्ध (श्रीताराचन्दजी आहूजा) हमारे सम्बन्ध दो प्रकारके होते हैं- 'लौकिक' गीतामें भी भगवान् श्रीकृष्णने कहा है—'ममैवांशो और 'अलौकिक'। लौकिक सम्बन्ध वे हैं, जो हमारे जीवलोके जीवभूतः सनातनः।' (१५।७) अर्थात् इस देहमें यह जीवात्मा मेरा ही सनातन अंश है। परिवार और संसारके साथ जुड़े होते हैं और अलौकिक सम्बन्ध केवल ईश्वरके साथ होता है। जहाँ हमारे सभी परमात्मा हमारा नित्य साथी है। कदाचित् हम अपने ऐसे लौकिक सम्बन्ध अस्थायी और अनित्य होते हैं, वहीं नित्य साथीको पहचाननेकी भूल करते हैं। काश! प्रभुके अलौकिक सम्बन्ध स्थायी और नित्य होता है। जबतक साथ अपने नित्य सम्बन्धकी हमें स्मृति हो जाती, वह सब प्रकारके सुख एवं सुविधाएँ हमें प्राप्त हैं, हमारे पास स्मृति सदा बनी रहती तो परिस्थिति भले कैसी भी क्यों धन-सम्पत्ति है, मान-सम्मान है, हमारे सम्बन्धसे लोगोंके न हो, हमारा जीवन दुखी न होता, इतना अस्त-व्यस्त स्वार्थोंकी पूर्ति होती है, तबतक हमसे सम्बन्ध रखनेवालोंकी न होता, जितना अब होता दिखायी देता है। हमें जो निराशा होती है, वह नहीं होती, जो नीरसताका बोध कमी नहीं होती। लोग हमारे सम्बन्धका हवाला देकर होता है, वह नहीं होता और जो असन्तोषका अनुभव गौरवका अनुभव ही नहीं करते वरन् उससे लाभ उठानेका भी प्रयास करते हैं, परंतु स्थिति जब इसके होता है, वह भी नहीं होता। विपरीत होती है अर्थात् आपत्ति-विपत्तियाँ हमें चारों सर्वविदित है कि हममेंसे प्रत्येककी रुचि भिन्न-ओरसे घेर लेती हैं, हमारा वैभव नष्ट हो जाता है, पग-भिन्न है। रुचिके अनुरूप ही हमारा उद्देश्य और कार्यक्षेत्र निर्मित और निर्धारित होता है। किसीका पगपर हमारा अपमान और तिरस्कार होता है, हमारे कार्यक्षेत्र स्वदेश-सेवाका है तो किसीका समाज-सम्बन्धोंके माध्यमसे काम बननेकी बजाय हमारे सम्पर्कमें आनेसे मिथ्या कलंक लगनेकी सम्भावना हो जाती है, सुधारका, किसीका कार्यक्षेत्र उद्योगका है तो किसीका व्यापार-व्यवसायका। कार्य करते हुए जो लोग हमारे तब अधिकांश लोग हमसे सम्बन्ध तोड़ लेते हैं। कभी सम्पर्कमें आते हैं, उनके साथ हमारा एक सम्बन्ध-सा हमसे सम्बन्ध था, यह प्रकट होनेमें भी लज्जाका अनुभव करते हैं और सम्बन्ध छिपानेकी चेष्टा करते हैं। स्थापित हो जाता है। फिर परस्पर आदान-प्रदान होता महापुरुषोंका कथन है कि सृष्टिके रचयिता एकमात्र है, लेन-देन होता है। प्राय: यह देखा गया है कि ऐसे भगवान् ही ऐसे हैं, जो जीवका किसी भी अवस्थामें सम्बन्ध स्थायी नहीं होते। ये सम्बन्ध तभीतक निभते हैं, साथ नहीं छोड़ते। वे हमसे एक क्षणके लिये भी अलग-जबतक हम अपने प्रयासमें सफल होते जाते हैं, जगतुकी थलग नहीं होते। वे आत्मरूपसे, अन्तर्यामीरूपसे सदैव दुष्टिमें सफल होते दिखायी देते हैं। जैसे ही असफलता हमारे साथ रहते हैं। उनका अनन्त सौहार्द हमें मिलता हाथ लगी अथवा लोगोंको लगा कि हमसे उन्हें इच्छित ही रहता है, चाहे हम कितने भी पतित क्यों न हो जायँ; वस्तुकी प्राप्ति नहीं हो सकेगी कि बस, वहीं सम्बन्धोंमें दरार आ जाती है और लोग सम्बन्ध-विच्छेद करनेपर क्योंकि वे पतितपावन भी हैं। हमारा उनका सम्बन्ध सदा उतारू हो जाते हैं। पहले-जैसा उत्साह और प्रगाढ़ता एक-सा बना रहेगा। हमारी आत्मा परमात्माका अंश है और वह कभी अपने अंशीसे दूर नहीं हो सकता। नहीं रहती। साथी हमारी असफलताके कारणोंपर विचार श्रीरामचरितमानसमें गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं— नहीं करते। वे तो बस यही देखते हैं कि सफलता हमारा साथ दे रही है या नहीं। हमारी सफलता और ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥

न होनेपर वह टूट गया। संसारके सारे सम्बन्ध इसी प्रकार सम्बन्ध और सहयोग मिलता है। असफल हुए नहीं कि सम्बन्ध भी दरकने लगते हैं। इस सम्बन्धमें दुर्गा-बनते-बिगड़ते रहते हैं। उनमें स्थायित्वका अभाव सदा सप्तशतीमें कथा आती है कि चक्रवर्ती सम्राट् राजा बना रहता है। कसमे-वादे सब धराशायी हो जाते हैं और सुरथका समस्त भूमण्डलपर अधिकार था, वे अपनी हम देखते रह जाते हैं। दूसरोंकी क्या कहें, परिवारके निकट

मन्त्रियोंने उनकी सेना और कोषको हस्तगत कर लिया और राजा सुरथको शिकार खेलनेके बहाने अकेले ही घोड़ेपर सवार होकर घने जंगलमें स्थित मुनि सुमेधाके

असफलतापर ही सम्बन्धोंका बनना और टूट जाना निर्भर

करता है। जबतक हम सफल हैं, तबतक सभीका

प्रजाका औरस पुत्रोंकी भाँति धर्मपूर्वक पालन करते थे, परंतु ऐसे धर्मप्राण सम्राट् भी जब दुर्भाग्यवश

कोलाविध्वंसियोंसे पराजित हो गये तो उनके दुरात्मा

आश्रमपर जाना पड़ा। इस प्रकार असफलताके समय उनके अपनोंने भी उनका साथ छोड़ दिया था। असफलताके कारण जब सम्बन्ध समाप्त हो जाते

हैं तो उस समय हम एक विचित्र-सी स्थितिका सामना करनेके लिये विवश हो जाते हैं, अजीब-सी उधेड़-बुनमें पड़ जाते हैं, क्या करें और क्या न करें ? तब हमें निराशा

जाते हैं। ऐसा इसलिये होता है; क्योंकि हमने ऐसी कल्पना नहीं की थी, परंतु वास्तविकता यह है कि ऐसा होना ही र्था, indivis के मिंद्रियों है है। अधिरापिक अधि

अहैतुक नित्य सम्बन्ध है, यदि उसे हम जान लेते, उसपर भरोसा करते तो हमें निराशा हाथ नहीं लगती। संसारके सम्बन्ध-सहैतुक हैं, इसलिये उसमें सौहार्द भी नहीं है। विशुद्ध प्रेममें कोई भी हेतु नहीं होता और जहाँ विशुद्ध प्रेम नहीं, वहाँ हमारे लिये कोई अपना सर्वस्व

न्यौछावर कर दे, यह सम्भव नहीं। दूसरी बात यह है कि हमारा जिनसे सम्बन्ध होता है, उनकी शक्ति-सामर्थ्यको भी एक सीमा है। उस सीमाके भीतर ही वे

सम्बन्धियोंके सम्बन्ध भी पल-भरमें बिखर जाते हैं।

ज्ञानीजन कहते हैं कि प्रभुके साथ हमारा जो

अनित्य था। वह एक ऐसा आधार था जो कि किसी

स्वार्थ या हेतुको लेकर स्थापित हुआ था और उसकी पूर्ति

भाग ९१

हमारी सहायता कर सकते हैं। तीसरी बात यह है कि उनका ज्ञान-कौशल भी देश-कालसे सीमित है। वे नहीं जानते कि विश्वमें कहाँ क्या हो रहा है, कल क्या हुआ और आनेवाले कलमें क्या होगा? उनके पास जो सीमित ज्ञान है, उसीके आधारपर ही वे हमारे साथ सम्बन्ध

रखकर कार्य करते हैं। इसीलिये वे जाने कितनी बार भूल कर बैठते हैं, किंतु परमात्माके साथ तो हमारा जो सम्बन्ध है, वह अनादि है, सनातन है, पुरातन है, सदा

स्थिर एकरस रहनेवाला है। उनके सम्बन्धमें कोई हेतु नहीं है। वह सम्बन्ध अत्यन्त निर्मल, असीम, प्रेमसे परिपूर्ण और नित्य है। ईश्वरको शक्ति-सामर्थ्यकी भी कोई सीमा नहीं। वे सर्वसमर्थ और सर्वज्ञ हैं। इसलिये उनसे कभी कोई तनिक-सी भी भूल नहीं होती।

प्रश्न उठता है कि जब हमारा ऐसे महामहिम प्रेममय और हताशा घेर लेती है और हम किंकर्तव्यविमूढ्से हो परमात्मासे नित्य सम्बन्ध है तो फिर हम उनपर भरोसा क्यों नहीं करते? उत्तर स्पष्ट है कि हमारी इन्द्रियाँ स्वभावसे बहिर्मुखी हैं, बाहरकी ओर देखती हैं, भीतरकी

```
संख्या ५ ]
                                       जग-जीव सभी रामाश्रित हैं
है; इसलिये ये परमात्माको जान नहीं पाते। जबतक प्रभुको
                                                    कथन है कि अज्ञानी मनुष्य ही पति, पत्नी, पुत्र, मित्र,
जानेंगे नहीं, तबतक बात नहीं बन सकती। इसलिये संत-
                                                    नाते, रिश्तेदारको अपनी आत्माका एक भाग मानकर
मनीषी कहते हैं कि हमें अन्तर्मुखी बनना होगा। अभी
                                                    इनकी वृद्धि होनेपर प्रसन्न तथा हानि होनेपर दुखी होता
तो अन्तर्मुख होनेकी बात तो दूर, हमारी इन्द्रियोंका प्रवाह
                                                    है। यह सब नाते-रिश्ते तो हमें ईश्वरने सेवा करनेके
सत्त्वमुखी भी नहीं हुआ है। हमारी इन्द्रियाँ प्रगाढ़
                                                    लिये दिये हैं। इन्हें अपना माननेवाला तो पतनके मार्गका
तमोगुणकी ओर दौड़ रही हैं। इसे रोकना होगा और मन
                                                    अनुगामी बनता है यानी चौरासीके चक्करमें घूमनेको
एवं बुद्धिको भगवान्में लगाना होगा। तब कहीं जाकर
                                                    विवश होता है। जीवका एकमात्र रिश्तेदार या सम्बन्धी
ईश्वरकी कृपा हमपर बरसेगी। ईश्वर कृपासाध्य है। वह
                                                    तो केवल ईश्वर ही है, जिसके साथ उसका नित्य
आग्रहसे नहीं अनुग्रहसे मिलता है। हम उसे तभी जान
                                                    सम्बन्ध है। स्वामी रामसुखदासजी कहा करते थे कि
सकते हैं, जब वह जनाना चाहे अन्यथा प्रभुको जानना
                                                    हमें इस सम्बन्धको यह कहकर नित्य स्मरण करना
सम्भव नहीं है। हमारे प्रभु ही हमारे सर्वस्व हैं, सम्पूर्ण
                                                    चाहिये कि 'मैं भगवान्का हूँ और भगवान् मेरे हैं।'
सृष्टिके नियन्ता हैं, नियामक हैं, पालक हैं, संचालक हैं
                                                    परमात्माका अंश होनेके कारण हम उसे सर्वाधिक प्रिय
यानी वासुदेव ही सब कुछ हैं—'वासुदेव: सर्वम्।'
                                                    हैं। वे अपनी वस्तुको सदैव एकटक देखते रहते हैं।
गीतामें स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने कहा है-
                                                    उन्होंने हमें कभी अपनी आँखोंसे ओझल नहीं किया है।
                                                    हम भले ही उन्हें भूल जायँ, पर वे हमें कभी नहीं भूलते
     अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
                                                    और न कभी भुला ही सकते हैं। वे सदैव हमारे साथ
     इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः॥
                                                    रहते हैं। जिसकी जो वस्तुएँ हैं, उन्हें वह देखता ही है,
                                          (१०।८)
     अर्थात् मैं वासुदेव ही सम्पूर्ण जगत्की उत्पत्तिका
                                                    सँभालता ही है। अपनी रचनासे क्या रचयिता कभी अलग
कारण हूँ और मुझसे ही सब जगत् चेष्टा करता है, इस
                                                    या दूर हो सकता है ? कदापि नहीं। हम भी परमात्माको
प्रकार समझकर श्रद्धा और भक्तिसे युक्त बुद्धिमान्
                                                    अपना पिता मानकर हृदयसे उनका नित्य स्मरण करें,
भक्तजन मुझ परमेश्वरको ही निरन्तर भजते हैं। महापुरुषोंका
                                                    सेवन करें तो हमारा कल्याण होना निश्चित है।
                              जग-जीव सभी रामाश्रित हैं
                                        ( श्रीसुरेशजी शुक्ल 'मृदुल')
कलिकालमें रामका
                                                                 प्रभा
                   नाम
                                                    रूप-अनूप
                                                                         मन-मानस.
शुभ कारक दोष निवारक है।
                                                           अपूर्व
                                                                   प्रकाशित न्यारी।
       संसृति
                     रहस्यमयी,
                                                    भाव-प्रभावसे
                                                                    दूर
                                                                           मलीनता,
               गृढ़
                                                                  करे
       ही
           मात्र विचारक
                           है ॥
                                                                           उजियारी॥
सद्धक्त
                                                    अन्तर-वास
                        राम-रमा
                                  जड़-जीव
                                                                                      है
                                                                                         रघुनन्दनका,
                                             सदा,
                                                                              वन्दन
                                               है।
                                                                                        प्रकाशित
                                                                                                  है।
                              प्रभूत
                                                                           पावन-भाव
                        मूल
                                     सुधारक
                  जग-जीवन जन्म
                                   वृथा
                                                                      चरणार्पित
                                                                                   मंज्-प्रसून
                                                                                                सदा,
                  प्रभु-प्रीति
                                               है ॥
                                                                            भक्ति-तरंग
                                                                                        प्रवाहित
                                                                                                  है ॥
                             सदा
                                    उपकारक
रामके
                     सुमोहक,
                                                    प्रभु की कृपा-कोरसे धन्य धरा,
        नामका
                 मन्त्र
                                                    जग-वाटिका नित्य सुवासित
                 है
                     पातकहारी।
जाप
       अखण्ड
प्रीतिका
                                                                       हे
         पर्व
               है
                   राम-महोत्सव.
                                                              असीम
                                                    अवलम्ब
                          भारी ॥
                                                               सभी
                                                                      रामाश्रित
पावनताकी
                                                    जग-जीव
              महानता
```

रामकथा— सीता-स्वयंवर ( श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') धनुर्भंग आवेशमें आकर डाँट दिया था। वे इस चेतावनीको भी 'वत्स रामभद्र! तुम धनुषको उठकर देखो तो!' कहीं अनावश्यक, अपमानजनक अथवा व्यंग्य न मान लें। महर्षि विश्वामित्रने श्रीरामकी ओर अत्यन्त स्नेहपूर्वक मंचसे उतरकर श्रीरामने घूमकर पुन: महर्षिको, मुनि-मण्डलीको मस्तक झुकाया और अपनी सहज देखा। केहरीकी समान गतिसे धनुषकी ओर चल पड़े। 'भगवन्! आप अनुमित दें तो मैं धनुषका स्पर्श करूँ।' उठकर श्रीरामने महर्षिको मस्तक झुकाकर अयोध्याके राजकुमार धनुष देखेंगे, यह सूचना तो पूछा—'उसे ज्यासज्ज करनेका प्रयत्न करूँ?' राजभवनमें और पूरे नगरमें अपने-आप हो गयी, जब 'अवश्य! अवश्य!' महाराज जनकने हर्ष-विह्वल इतना विशाल धनुष पाँच सहस्र व्यक्ति खींचकर ले स्वरमें कहा। बिना यह देखे कहा कि बात उनसे नहीं— आये। इधर बहुत दिनोंसे धनुष अपने अर्चा-स्थानपर महर्षि विश्वामित्रजीसे पूछी गयी है। था। उसे देखने, उठाने आनेवालोंकी चर्चा समाप्त हो महर्षिने केवल भू-संकेतसे अनुमित दे दी। भूका गयी थी मिथिलामें। आज धनुष जब पुनः रंगस्थलपर वह संकेत था—'धनुषको तोड़ फेंको।' ले जाये जानेका समाचार मिला, नगरके नर-नारी महाराज जनकने, उनके कुलपुरोहितने तथा सभासदोंने कुतूहलवश एकत्र होने लगे। महाराजके अन्त:पुरको भी अबतक धनुष-तोड्नेके लिये आनेवाले सहस्रश: नरेशोंको वहाँ आना था। इसकी सम्भावना पहलेसे थी, अत: सबके बैठनेकी व्यवस्था भी पहलेसे की गयी थी। देखा था। उनमें बहुत-से अपने बल-विक्रमके लिये

[भाग ९१

प्रसिद्ध थे, किंतु जो आते थे। उतावलीमें आते थे। अपने वस्तुत: तो रंगशालाका निर्माण और वहाँ सबके बैठनेकी पौरुषका गर्व लिये आते थे और डींग मारते आते थे। व्यवस्था तभी हुई जब महाराज जनकने धनुर्भंग आज जो शत-शत मनोभव-मनोहारी पुण्डरीकाक्ष रघुकुल-करनेवालेको कन्यादान करनेकी प्रतिज्ञा घोषित की। इस कुमार उठ खड़े हुए हैं धनुषकी ओर चलनेको—उनकी समय तो उस उपेक्षित रंगशालाकी नवीन सज्जामात्र कल गरिमा, उनकी गम्भीरता, उनका ओज अपूर्व है। यह सायंकाल करनी पड़ी थी। शोभा और शील दुर्लभ है विश्वमें। धनुषके रंगशालामें पहुँचनेसे पूर्व ही लोग वहाँ आ गये थे। राजसेवकोंने सबको यथायोग्य स्थानोंपर बैठाया। कोई त्वरा नहीं, कोई शंका-रेखातक नहीं। श्रीराम व्यवस्थामें कठिनाई इसलिये भी नहीं हुई; क्योंकि उठे, उन्होंने पटुकातक कटिमें कस लेना आवश्यक नहीं

अपना धनुष स्कन्धसे उतारकर अनुजको दे दिया उन्होंने पता था। इसके वे अभ्यस्त थे। और मंचसे उतर गये। 'अवधके सुकुमार अल्पवय कुमार और इतना महाराज जनकका वात्सल्य मचल उठा। उनकी भारी धनुष?' लोगोंके हृदय आशंकासे पूर्ण थे, किंतु इच्छा हुई और इच्छा हुई शतानन्दजीकी भी कि कह निश्चित कोई नहीं था। जिन कुमारोंने सहस्र-सहस्र दें—'वत्स! पटुका कटिमें लगाओ और अलकें समेट राक्षस खेलमें मार दिये, जिनकी पदरज पाकर पाषाणीभूता

लोगोंको अपने वर्गके रंगशालामें बैठनेके निश्चित स्थानका

ऋषि-पत्नी परित्राण पा गयी, वे साधारण राजकुमार तो

नहीं हैं। वे धनुष नहीं उठा सकते, यह कोई कैसे

माना। महर्षिने भी उन्हें ऐसा करनेको नहीं कहा। केवल

लो, किंतु मुखसे कहा नहीं गया। इसलिये भी कहनेमें

संकोच हुआ; क्योंकि अभी-अभी कुमार लक्ष्मणने

संख्या ५ ] सीता-ः क्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	स्वयंवर ****************
—————————————————————————————————————	
मनुष्यका स्वभाव प्राय: अपने अनुकूल परिस्थिति	श्रीजनकनन्दिनीकी दृष्टि लगी है—अपलक लगी
बनेगी, यही सोचनेका है। कठिन-से-कठिन, अशक्यतम	है उनपर, जो स्वत: हृदयधन हो चुके; किंतु भय,
स्थितियोंमें भी मनुष्य अनुकूलताकी सम्भावना कल्पित	चिन्ता—क्या होनेवाला है ? कहीं—प्रेम सदा आशंकी
कर लेता है। सदा प्रतिकूलकी सम्भावना करनेवाले तो	होता है। अत्यन्त आकुल है उनका हृदय।
पूर्वजन्मके पापकर्मा, अतः नित्य दुखी रहनेवाले अशान्त	सबकी दृष्टिके एकमात्र केन्द्र श्रीराम कहीं किसी
्र व्यक्ति होते हैं। ऐसे दुर्बल मानस मिथिलामें नहीं थे।	ओर नहीं देखते हैं। वे मत्तगयन्द गतिसे जा रहे हैं।
'ये कमललोचन इन्दीवर–सुन्दर हमारी राजनन्दिनीका	जाकर उन्होंने अंजलि बाँधकर शिव-धनुषको मस्तक
पाणि-ग्रहण करें तो हमारा जीवन भी धन्य हो जाय!	झुकाया और फिर मंजूषाकी परिक्रमा करके पूर्वस्थानपर
हम भी इस सम्बन्धसे इनको अपना कह सकें।' जन-	आ खड़े हुए। पीछे घूमकर श्रीरामने पुन: वहींसे महर्षि
जनके हृदयकी उत्कट कामना थी। इस अभिलाषाने	विश्वामित्रको तथा मुनि-मण्डलीको मस्तक झुकाया।
आशा एवं सम्भावना उत्पन्न कर दी।	'सफल-काम हो वत्स!' महर्षि याज्ञवल्क्यने
श्रीराम जब धनुषकी ओर चल पड़े, सभी मिथिलाके	श्रीरामको अपनी ओर मस्तक झुकाते देखकर स्पष्ट
नर-नारी आतुर हृदयसे अपने इष्टदेवोंके स्मरणमें लग	स्वरमें आशीर्वाद दिया।
गये। कोई जप कर रहा था, कोई स्तोत्रपाठ और कोई	श्रीराम धनुषकी ओर मुड़े। उन्होंने सरलतापूर्वक
प्रार्थना—'ये कुमार पिनाक भंग करनेमें सफल हों—	धनुषको उठाया और उसकी निम्नकोटि (नोक) पृथ्वीपर
हमारे सम्पूर्ण पुण्योंके प्रभावको लेकर सफल हों!'	टिकाकर धनुषमें लगी प्रत्यंचा अपनी दाहिनी कलाईपर
महारानी सुनयनाने आज अभी देखा श्रीरामको।	लपेटी। बस इतना ही कुछ स्पष्ट सबने देखा। इसके पश्चात्
उनका हृदय वात्सल्यसे व्याकुल हो उठा—'महाराज	जो कुछ हुआ, इतना शीघ्र, इतना त्वरित हुआ कि पूरा-
विवेकिनिधि कहे जाते हैं, किंतु इस समय कहाँ सो गया	पूरा उसे लक्षित कर पाना किसीके लिये शक्य नहीं था।
उनका विवेक ? वे यह क्या कर रहे हैं ? उन्हें कोई रोकता	धनुष बलपूर्वक झुकाकर उसपर प्रत्यंचा चढ़ा दी
क्यों नहीं ? ये तो बालक हैं, अपने बाल स्वभाववश धनुष	गयी और श्रीरामने उसे वामहस्तमें उठाकर सम्भवत:
उठाने जा रहे हैं। मेरी कन्याने जब धनुष उठा लिया	ज्याघोष करनेके लिये प्रत्यंचा खींची। वे एक झटकेमें
था, महाराज कितने असन्तुष्ट हुए थे। धनुष भारी है,	यह सब कर गये। उनके दक्षिण करने प्रत्यंचा झटकेसे
कहीं उठानेपर इनके हाथसे छूटकर गिर पड़े!	खींची—खिंचता चला गया धनुष।
महारानी अन्त:पुरकी सखी-सेविकाओंके साथ हैं।	एक तीव्र प्रकाश—कहीं एक साथ सहस्रश:
पर्दा है नारियोंके बैठनेके स्थानपर। इस समय महाराजको	वज्रपात हों, उससे भी तीव्रतम प्रकाश और भयंकर
कोई सन्देश भी भेजनेकी स्थिति नहीं है। वे महर्षि	कड़कड़ाहटकी ध्वनि। उस रंगशालामें सैकड़ों वज्रपात
विश्वामित्रके समीपसे इधर आते तो उनको समीप	एक साथ होते तो भी इतना प्रचण्ड शब्द नहीं होता।
बुलवाया जा सकता। महारानीका हृदय छटपटा रहा है।	महर्षि विश्वामित्र, महर्षि याज्ञवल्क्य, शतानन्दजी,
सखी—अन्त:पुरकी सबसे वृद्धा, चतुरा सखी महारानीको	मुनि-मण्डलीके तपस्वियोंके अतिरिक्त केवल महाराज
समझानेमें लगी है। उसका दृढ़ विश्वास है कि श्रीराम	जनक और कुमार लक्ष्मण बैठे रह गये अपने आसनोंपर।
धनुर्भंग कर देंगे, किंतु महारानीका हृदय—वह वात्सल्यपूर्ण	शेष सब उपस्थित लोग आसनोंसे गिर गये। पूरी

भाग ९१ मिथिलामें मानो भूकम्प आ गया। पक्षी चिल्लाते उड्ते नहीं हुई थी। रहे और अश्व, गज, वृषभ अपने बन्धन तोड़कर शतानन्दजीने करोंके संकेतसे सभीको रोक दिया दिशाओंमें व्याकुल दौड़ने लगे। था कि सब अपने स्थानोंपर ही रहें। कोई श्रीरामके समीप पहुँचनेकी त्वरा न करें। सचमुच शतानन्दजीने यह जयमाल संकेत करनेकी त्वरा न की होती तो अनेक लोग 'श्रीअवधेशकुमारकी जय!' 'श्रीकौशल्यानन्दनकी जय!' 'श्रीचक्रवर्ती कुमारकी जय!' 'श्रीरामकी जय!' श्रीरामको अंकमाल देने आ चुके होते। स्वयं श्रीराम 'जय! जय! जय! जय!' धनुर्भंगकी घोरतर ध्वनिने दो महर्षि विश्वामित्रके चरणोंमें प्रणाम करने पहुँचनेको क्षणको मनुष्योंको स्तब्ध-चिकत कर दिया; किंतु गगन उत्सुक थे। जयनादसे गूँजने लगा। सुरोंके करोंकी सुमनवृष्टि, उनका 'महारानी! राजनन्दिनीको जयमाल लेकर शीघ्र जयघोष और उनके वाद्योंकी प्रतिध्वनिके समान प्रतिक्रिया भेजें!' शतानन्दजीने सावधान न किया होता तो अपार हुई मिथिलामें। नगर वाद्य-ध्वनिसे गुँजा-गुँजता रहा। आह्लादके आवेगमें यह आवश्यक कर्तव्य महारानीको निश्चय विलम्बसे ही स्मरण आता। भेरी, शंख, दुन्दुभी, शृंग और करतल-ध्विन देरतक गूँजती रही। रंगशाला सुमन-वर्षासे भर उठी। दूसरोंकी जयमाल-ज्योतिर्मय रत्नोंसे निर्मित वह जयमाल बात नहीं, अनेक मुनि एवं तापसतक अपने आसनोंपर प्रस्तुत तो नहीं करना था। वह तो तभी बनवाया गया खड़े होकर मृगचर्म अथवा उत्तरीय फहराते जयघोष जब महाराजने धनुर्भंगके साथ पुत्रीके परिणयका सम्बन्ध करने लगे थे। प्रतिज्ञाके द्वारा जोड़ दिया। महारानीने उसे बहुत बार साथ रखा है। कोई धनुष उठाने आये तो वह पेटिका सबसे पहले मुनि शतानन्द सावधान हुए। वे उठे और लगभग दौड़ते पहुँचे श्रीरामके समीप। उन्हें हृदयसे महारानीके साथ सिखयाँ लाती रही हैं। यह जैसे लगाकर कहा—'वत्स रामभद्र! तुमने महाराज जनकको, आवश्यक सामग्री थी। बहुत समयके पश्चात् वह पेटिका रंगस्थलमें लायी गयी थी। मुझे, मिथिलाको कृतार्थ कर दिया। अब कृपा करके महारानीने तो रंगशाला आते समय सखीको पेटिका कुछ क्षण यहीं प्रतीक्षा करो।' उठाते देखकर कहा था—'इसे क्यों लिया है? अवधके श्रीरामने धनुषके दोनों खण्ड मंजूषासे बाहर पृथ्वीपर फेंक दिये थे। अब उन खण्डोंमें परस्पर इतना राजकुमार तो केवल धनुष देखने आ रहे हैं!' सखीने हँसकर कह दिया था—'महारानी! आपने ही सम्बन्ध रहा था कि उनके सिरे एक ही ज्यामें आबद्ध थे, जैसे वे दो अभिन्न हृदयोंके—अभिन्न तत्त्वोंके उन्हें नहीं देखा, किंतु कल जब नगर-दर्शनको वे आये ग्रन्थि-बन्धनके प्रतीक बन गये हों। तो मैंने गवाक्षसे देख लिया है। यह नन्हीं पेटिका कोई श्रीरामने शतानन्दजीकी ओर देखा। अब उन्हें क्यों धनुष है कि इसे उठानेकी बात सोचनी पडेगी? सोचनी यहाँ खड़ा रहना चाहिये? किंतु मिथिलाके राजपुरोहित भी पड़ती तो हमारी राजनन्दिनी उस धनुषको भी उठा तो दौड़े जा रहे थे उस ओर, जहाँ महिलाओं के बैठनेकी चुकी हैं।' व्यवस्था थी। अतः श्रीराम मस्तक झुकाये खडे रहे। 'उसने धनुष उठाकर ही तो महाराजके लिये आदेश-पालनके अतिरिक्त उपाय नहीं था। अभी वाद्यध्वनि समस्या खड़ी कर दी है।' महारानी खिन्न हो गयी थीं। तथा जयनादके मध्य किसी थोड़ी दूरके व्यक्तिकी बात 'कौन जाने आज जयमाल उठाकर उस समस्याका भी पंतर्पयां आहां पिंड द्वादर्सि विष्ठ क्षा भी पुरुष्पे कि क्षा भी भी भी कि स्वाप्ति अर्थ कि क्षा भी कि कि स्व धनुष देखेंगे, किंतु जिनकी पद-रज मुनि-पत्नीका कहाँ इतना उठ जाते हैं और संकोचवश भुजाएँ कैसे पाषाणत्व भंग कर सकती है, उनकी दृष्टि धनुषकी पूरी उठायी जा सकती हैं। श्रीरामने मस्तक झुकाकर जडता भी तो भंग कर सकती है।' अवसर दिया। जयमाल उनकी ग्रीवामें पड़ी, उनके इस समय महारानीने उस सखीकी ओर देखा, किंत् श्रीवत्सांकित वक्षपर लहरायी और गगन जयनादसे पुनः वह तो वह नन्हीं स्वर्ण-पेटिका लेकर राजनन्दिनीके गुँजने लगा। समीप पहुँच चुकी थी। उसने पेटिका खोलकर जयमाला राजनन्दिनी उस क्षण लौट पड़ीं। श्रीराम भी मुड़े श्रीसीताके करोंमें दे दी और सिखयोंको संकेत कर और आकर महर्षिके पदोंमें मस्तक झुकाया तो दिया। राजनन्दिनीको हृदयसे लगाकर उसने केवल इतना विश्वामित्रजीने उन्हें हृदयसे लगा लिया। लक्ष्मणने उठकर अग्रजके पदोंमें प्रणाम किया। श्रीरामने उन्हें कहा—'वत्से! आवश्यक कर्तव्य है यह।' भुजाओंमें भर लिया। सिखयोंसे घिरी अवगुण्ठनवती भू-तनया जब राजमहिलाओं के बैठनेके स्थानसे बाहर आयी, तब कहीं राजनन्दिनी जब जाकर सिखयोंके मध्य बैठ गयीं, लोगोंका कोलाहल विरमित हुआ। तब जयघोष रुका सबसे पहले उनको उनकी अनुजाने ही छेडा—'जीजी! और तब श्रीराम समझ सके कि उन्हें मिथिलाके कुल-तुम तो सदा अपनी धुनमें रहती हो। कोई कुछ कहे, पुरोहितने क्यों यहाँ तनिक प्रतीक्षा करनेको कहा था। सुनती ही नहीं हो।' सौन्दर्यकी मूर्तियोंके मध्य उनकी साक्षात् अधीश्वरी। 'क्यों, मैंने कब तुम्हारी नहीं सुनी?' श्रीजानकीने पाटलवर्णी साड़ी, अरुण उत्तरीय मस्तकको ढककर चौंककर देखा। अवगुण्ठन बना। वस्त्रोंमें-से झलमलाते रत्नाभरण, अवनत 'सिखयाँ कितना तो कह रही थीं जीजाजीके वदना, मृणाल सुकुमार करोंमें जयमाला सम्हाले, सिखयोंसे चरणस्पर्शको!' उर्मिलाने उलाहना दिया—'वहाँ कोई घिरी श्रीजनकराजतनया बालमराल-गतिसे, धीरे-धीरे उच्चस्वरसे पुकार सकता था, किंतु तुम लौट ही पड़ीं।' आगे बढ़ने लगीं। सिखयोंके मनोहर गानका साथ देने 'अब तुम उनके चरणस्पर्श कर आओ।' मन्दस्मितके लगे महाराजके वाद्य और सुर-वाद्य भी। दिशाएँ झूम साथ भू-नन्दिनीने अनुजाकी पीठपर कर रखा। उठीं। वायुके पद भी विरमित होने लगे। 'सचमुच कर आऊँ?' उर्मिलाने बिना संकोच सिखयोंसे घिरी राजकुमारी जब श्रीरामके सम्मुख पूछा—'वे कितने अच्छे हैं। मेरे पूज्य तो हैं ही।' आकर खड़ी हुईं भुजलताओंमें जयमाल उठाये—उस 'हाँ कर आ! लेकिन छोटे कुमारके।' सखियाँ भी शोभाका वर्णन सम्भव नहीं हुआ कभी किसीके लिये हँस पडीं यह सुनकर। भी। श्रीरामका श्रीविग्रह ऊँचा है। यद्यपि श्रीजनकराज-'जीजी! तुम अब अच्छी नहीं रहीं!' उर्मिलाने तनया भी लम्बी, पतली हैं, किंतु उनके कर-पल्लव लज्जावश अग्रजाके अंकमें ही मुख छिपा लिया। 'राम राम जपिये' ( श्रीओमप्रकाशजी अग्निहोत्री 'सुबोध') कर्म का विधान सब भाँति है प्रबल मानि, धरा पर जनम पाइ दुख पाये सभी ने हैं, सुख-दु:ख से विरत हो शान्त सम रहिये। कामनाएँ छाँड़ि सब सहज चित्त बसिये। राम और कृष्ण के जीवन को याद करो, आशा, आसक्ति, अहंकार, मोह तजि 'सुबोध', दुखों के सागर को निवेरि सुख लहिये॥ अनुरक्ति करि राम-राम

'राम राम जपिये'

संख्या ५ ]

मृत्यु क्या है ?

(श्रीरणवीरजी शास्त्री)

मृत्यु क्या है ? कुछ उदाहरणोंके द्वारा इसे समझनेका कोई भी व्यक्ति क्या करेगा ? हम बताते हैं उस दीपकको प्रयत्न करेंगे। मृत्युके उपरान्त तेरहवें दिन सभी लोग उठाकर किसी ऐसे स्थानपर रख देंगे कि हवाका झोंका एकत्र होते हैं तो उसे लोकमें शोकसभा कहा जाता है, उसे बुझा न दे और फिरसे जला देंगे। यही मृत्यु है। हमारे जबिक वह 'शोकविमोचन सभा' है। शोक तो तेरह दिन बीच तेरह दिन पहले जो दीपक जल रहा था, वह अचानक पहले हो चुका है, आज तो उस शोकसे उबरनेके लिये बुझ गया। आप कहेंगे कि वह बूढ़ा हो चुका था, उसका कुछ अच्छी–अच्छी बातें सीखनेके लिये इकट्ठे हुए हैं। तेल समाप्त हो गया था, नहीं, ऐसा नहीं है, हो सकता है

कुछ अच्छी-अच्छी बातें सीखनेके लिये इकट्ठे हुए हैं। आज हम यह जाननेकी कोशिश करेंगे कि मृत्यु क्या है? पहले यह जानें कि मृत्युका भय किसे होता है। एक व्यक्ति तो ऐसा है जो मृत्युके बारेमें कुछ जानता ही नहीं है, वह मृत्युसे नहीं डरेगा और एक व्यक्ति वह है जो मृत्युको पूर्ण रूपसे जानता है, वह भी मृत्युसे नहीं डरेगा, तो डरेगा कौन? वह जिसे अधूरा ज्ञान है, जैसे आप और हम लोग; क्योंकि हमें मृत्युके बारेमें पूर्ण ज्ञान नहीं है। इसको एक उदाहरणसे समझिये, एक चार मासका बालक है, जो फर्शपर खेल रहा है। एक सर्प आ जाता है तो वह बालक उस सर्पको पकड़नेकी चेष्टा करेगा और पकड़ भी लेगा चूँकि वह नहीं जानता। उसी जगहपर एक सँपेरा बैठा है, वह सर्पके आ जानेपर उसे पकड़ लेगा और बन्द कर लेगा; क्योंकि वह सर्पके बारेमें पूर्ण रूपसे जानता है। वे दोनों ही सर्पसे डरेंगे नहीं, डरेगा कौन? हम सब। अभी यहाँ सर्प आ जाय, हम

मासका बालक है, जो फर्शपर खेल रहा है। एक सर्प आ जाता है तो वह बालक उस सर्पको पकड़नेकी चेष्टा करेगा और पकड़ भी लेगा चूँिक वह नहीं जानता। उसी जगहपर एक सँपेरा बैठा है, वह सर्पके आ जानेपर उसे पकड़ लेगा और बन्द कर लेगा; क्योंिक वह सर्पके बारेमें पूर्ण रूपसे जानता है। वे दोनों ही सर्पसे डरेंगे नहीं, डरेगा कौन? हम सब। अभी यहाँ सर्प आ जाय, हम सभी इधर-उधर भागेंगे; क्योंिक हमें अधूरा ज्ञान है। एक और उदाहरण—एक सड़कपर एक व्यक्ति खड़ा है, उधरसे एक ट्रक तीव्र गतिसे आ रहा है। सड़कके किनारे खड़े लोग चिल्ला रहे हैं, हट जाओ, लेकिन वह नहीं हट रहा है। वह ट्रकको आते भी देख रहा है और उन लोगोंकी चिल्लाहट भी सुन रहा है, लेकिन हट नहीं रहा है। उसका कारण है कि वह पागल है, वह नहीं जानता कि ट्रक उसे टक्कर मार देगा और वह मर जायगा, वह मृत्यु आनेपर भयभीत नहीं होगा। जब मृत्यु आयेगी, उसे स्वीकार कर लेगा। डरेगा कौन? हम; क्योंिक हमें अधुरा ज्ञान है।

अन्तमें भस्म होनेवाला ही है। यदि इस बातको समझ लिया जाय तो मृत्युसे भय नहीं लगेगा। एक माँका पुत्र उसे छोड़कर कहीं चला जाता है, वह ५ वर्ष-१० वर्षतक नहीं आता है। अचानक दस वर्ष बाद कोई व्यक्ति आकर बताता है कि माँ! तेरा पुत्र तो कनाडामें है। वह बहुत खुश होती है, लेकिन वह व्यक्ति कहता है कि माँ! समस्या यह है कि तेरा वह पुत्र कभी तुझसे मिलेगा नहीं, वह अब कभी आयेगा नहीं। तो वह माँ कहती है कि एक बात तो बता वह ठीक तो है? हाँ,

माँ! वह बहुत मजेमें है, तो वह भी कहती है कि कोई बात

अभी और तेल बाकी हो, कई नौजवान लोग हमारे बीचसे

चले जाते हैं, उनके अन्दर बाती भी होती है, तेल भी भरपूर होता है, वे फिर भी बुझ जाते हैं। हमारे बीचमें जो

दीपक था, उसे उठाकर कहीं और जला दिया गया है।

फर्क यह कि उस जलानेवाली शक्तिको उस परमपिताको

पुत्र, धन-वैभव सम्मान मिले या न मिले, लेकिन मृत्यू

सभीको आयेगी, चाहे कोई गरीब हो या चाहे कोई अमीर हो। यजुर्वेदके ४०वें अध्यायके १५वें श्लोकमें

कहा है—'**भस्मान्त छं शरीरम्**' मतलब है शरीर तो

संसारमें यह सम्भव है कि सभी व्यक्तियोंको स्त्री,

हम नहीं देख पाये। 'बस, यही तो मृत्यु है।'

िभाग ९१

है। उसका कारण है कि वह पागल है, वह नहीं जानता कि नहीं, वह नहीं मिलेगा न सही, वह जहाँ है खुश है न। ट्रक उसे टक्कर मार देगा और वह मर जायगा, वह मृत्यु बस, वह खुश ही रहे। हमारे बीचसे जो व्यक्ति गया है, आनेपर भयभीत नहीं होगा। जब मृत्यु आयेगी, उसे स्वीकार वह अब कभी हमें मिलेगा नहीं, वह अब कभी यहाँ कर लेगा। डरेगा कौन? हम; क्योंकि हमें अधूरा ज्ञान है। आयेगा नहीं, तो क्या हम उस व्यक्तिके लिये रोने–तड़पनेकी एक बात और जरा ध्यानसे समझियेगा—एक दीपक जगह उस माँकी तरह सब्र नहीं कर सकते। यह मानकर है, उसमें बाती भी है, तेल भी भरा है। दो घण्टे जल सके हतना तेल है। दीपक जल रहा है, लेकिन एक हवाका बातको समझ लें तो मृत्युसे भयभीत नहीं होंगे। ध्यान दीजियेगा, चाणक्यने तीन बातें बतायी हैं।

संख्या ५ ] मृत्यु क	या है ? ३३
\$	**********************************
यदि उन बातोंको हर समय याद रखा जाय तो मनुष्यको	रखा था पुस्तक नहीं देनी है, लेकिन बात यह थी कि वह
मोक्षकी प्राप्ति हो सकती है। पहली बात जिस समय हम	महाशयजी शास्त्रीजीसे कई गुना अधिक ताकतवर व्यक्ति
श्मशान जाते हैं और चिताको जलते हुए देखते हैं तो	थे। इसलिये वे पुस्तकको छीनकर ले गये। शास्त्रीजी बहुत
सभीके मनमें एक ही बात आती है कि यह संसार मिथ्या	छटपटाये। परिवारवाले भी रोये-चिल्लाये, पर वे तो अपनी
है, हम सभीको इसी तरह चितामें जल जाना है, सभी	पुस्तक ले गये—'यही मृत्यु है।'
लोगोंको क्षणिक वैराग्य हो जाता है, लेकिन देखा यह	यहाँ महाशय स्वयं परमपिता परमेश्वर हैं और वह
जाता है कि जैसे ही हम लोग श्मशानसे बाहर आते हैं	शास्त्रीजी हम सभी लोग हैं और यह हमारा शरीर और
फिर वही मोह, माया, घर, परिवार, कारोबारकी बातें।	आत्मा ही वह पुस्तक है और उसके चार अध्याय हैं—
अभी थोड़ी देर पहलेवाला वैराग्य भूल जाते हैं। दूसरे जब	ब्रह्मचर्य-आश्रम, गृहस्थ-आश्रम, वानप्रस्थ-आश्रम और
किसी बीमार व्यक्तिसे मिलते हैं, जो अस्पतालमें जीवन	संन्यास आश्रम।
और मौतसे लड़ रहा हो, उस समयपर भी वही स्थिति	वह पुस्तक हम सभी लोगोंको उस परमपिताका
होती है, जो श्मशानमें होती है। तीसरी जगह है सत्संग,	स्मरण करने और इस मृत्युका रहस्य जाननेके लिये दी
जहाँपर बैठकर भी हर व्यक्तिको क्षणिक वैराग्य हो जाता	गयी थी, लेकिन हम सभी लोग ऐसा नहीं करते। इस
है। यदि इन तीनों जगहपर होनेवाली मन:स्थितिको हम	कारणसे सभी लोगोंको शास्त्रीजीकी तरह ही रोना और
चौबीसों घण्टे हर समय बनाये रखें तो आप यह समझ	बिलखना पड़ता है। यदि हम लोग उस परमपिताका
लीजिये कि मोक्ष निश्चित है।	स्मरण करें और इस मृत्युके रहस्यको जान लें तो मृत्युके
मृत्युके विषयमें एक और उदाहरण द्रष्टव्य है, एक	समय हमें और हमारे परिवारवालोंको रोना न पड़े।
महाशयके पास हमें एक पुस्तक दिखायी पड़ी। हमने	आज हर व्यक्ति इस होड़में लगा है कि मेरी दूकान,
कहा—'जरा दे सकते हैं ?' उन्होंने कहा—'हाँ, क्यों नहीं ?'	मेरा मकान पड़ोसीसे बड़ा होना चाहिये और इस बातकी
हमने दो–चार पेज पढ़े, हमें अच्छी लगी। हमने कहा कि	पूर्तिके लिये साम, दाम, दण्ड, भेद किसी भी प्रकारसे वह
क्या हम इसे घर ले जा सकते हैं ? उन महाशयने स्वीकृति	पूरा करनेमें लगा है, क्या होगा इससे ? आप सभी लोगोंने
दे दी। हम वह पुस्तक घर ले आये। हमें वह पुस्तक इतनी	पढ़ा होगा, ईसासे २५०० से १५०० वर्ष पहले मेसोपोटामिया
अच्छी लगी कि हम उसे पढ़ना तो भूल गये और इस	और हड़प्पा-मोहनजोदड़ो नामक दो सभ्यताएँ थीं। पुरातत्त्व
चक्करमें लग गये कि हमें यह पुस्तक वापस न देनी पड़े।	विभागकी खुदाईसे पता चलता है कि उसके लोग भी
इसके लिये हमने उस पुस्तकपर लिखा हुआ नाम हटाकर	बहुत समृद्धिशाली थे। उस समय भी इसी प्रकार मकान-
अपना नाम लिख लिया। उसकी बनावट बदल दी, उसको	दूकान हुआ करते थे, लेकिन समयके साथ सभी कुछ मिट्टीमें
सजाने-सँवारनेमें लग गये और हर समय इसी चक्करमें	दब गया। हम जो कर रहे हैं, उस सबका भी ऐसा ही
रहने लगे; कभी आलमारीमें, कभी बिस्तरके नीचे, कभी	होगा। कुछ साथ नहीं जायगा। साथ जायगा उस परमपिताका
इधर, कभी उधर—हर समय यही डर बना रहता कि वे	स्मरण और उसकी राहमें हमारा किया हुआ पुरुषार्थ,
महाशय माँगने न आ जायँ; क्योंकि मन चोर है, वह तो	सभी मकान–दूकान–गाड़ी इत्यादि यहींपर रह जायँगे।
यह बात अच्छी तरहसे जानता है कि यह पुस्तक मेरी	एक आखिरी उदाहरण है—दो विद्यार्थियोंने एक
नहीं, उस पुस्तकमें केवल चार अध्याय थे, उन्हें पढ़नेकी	विद्यालयमें दाखिला कराया, विद्यालयके प्राचार्यने दोनोंको
कोशिश नहीं की। यदि पढ़ लेते तो उस पुस्तकको रखनेकी	बुलाया और दोनोंको एक-एक पुस्तक दी और कहा
आवश्यकता ही नहीं पड़ती, घरवालोंको समझा दिया कि	एक वर्ष बाद जो परीक्षा होगी, उसमें सभी कुछ इसीमेंसे
पुस्तक माँगने आये तो मना करना है, कहना पुस्तक हमारी	आयेगा, लेकिन एक शर्त है कि आप दोनोंको परीक्षासे
है, हमारा नाम लिखा है। कुछ समय पश्चात् उन महाशयको	एक महीने पहले ये किताबें लौटानी होंगी। उनमेंसे एक
याद आया कि वह पुस्तक तो शास्त्रीजी ले गये थे और	विद्यार्थीने रात-दिन मेहनत की और उस पुस्तकको पूरा
माँगने चल दिये। आ पहुँचे दरवाजेपर। सभीने मन बना	याद कर लिया और नोट्स भी बना लिये पर दूसरे

विद्यार्थीने पुरे वर्ष मटरगश्ती की। उसे नहीं पढा। आगे रोया-गिडगिडाया कि मुझे दो दिनकी इजाजत आखिर समय आया और प्राचार्यने दोनोंको बुलाया। उस और दे दो, लेकिन नियम-तो-नियम होता है। इसलिये पुस्तकको लौटानेके लिये कहा, तो जिस विद्यार्थीने उसे यह बात याद रिखये कि मृत्यु तो अवश्यम्भावी है, इससे पढा था, याद किया था, उसने आरामसे लौटा दिया, पहले कि चिता जल उठे, चेत जाइये। लेकिन जिसने वर्षभर मटरगश्ती की थी, वह प्राचार्यके [ प्रेषक — श्रीनीरजकुमारजी वैश्य ]

संत-वाणी ब्रह्मलीन योगिराज श्रीदेवराहा बाबाजीके उपदेश

🗱 वेदविद्या भारतीय संस्कृतिकी पहली प्रतीक है। वेदविद्या त्रयीविद्या कहलाती है। ऋक्, यजुः और साम

ही त्रयीविद्या हैं। चतुर्थ वेद अथर्व तो त्रयीका ही उपलक्षण है। त्रयीविद्याका सम्बन्ध अग्नित्रयसे है। अग्नि, वायु और आदित्य—ये तीन तत्त्व ही विश्वमें

व्याप्त हैं। पुरुष ब्रह्मके तीन पैर ऊपर हैं और एक पैर विश्व है। त्रयीविद्याके समान ज्ञान, कर्म और उपासनाका त्रिक् वेद-विद्याका दूसरा स्वरूप है, जिसके माध्यमसे वेद-विद्याकी सत्-चित् और आनन्द इन तीन विभृतियोंकी अभिव्यक्ति हो रही है। विश्वके सम्पूर्ण धर्मींके केन्द्र-

बिन्दु इस त्रिकुमें ही स्थित हैं। यह त्रिकु ही और अधिक विशिष्टरूपमें गायत्री, गंगा और गौके रूपमें प्रस्फुटित हुआ है। इसलिये गायत्री, गंगा और गौके तत्त्वको ठीक-ठीक समझना ही भारतीय संस्कृतिके मूल तत्त्वोंको समझना है। 📽 गौ, गंगा और गायत्री ही भारतीय संस्कृतिके

मुख्य और मूल प्रतीक हैं। गौ और गंगाकी महत्ता-उपयोगिता साधारणतया सभीको मान्य है, जो लोग उन्हें देवतारूपमें स्वीकार नहीं करते, वे भी उनकी लौकिक उपयोगिताको स्वीकार करते हैं।

📽 मूलरूपमें गंगा और गायत्री एक ही हैं। जितना क्षेत्र गायत्रीका है, उतना ही गंगाका। इसी भावको स्पष्ट करनेके लिये गंगाकी तीन धाराएँ मानी गयी हैं— पाताल-गंगा, भागीरथी गंगा और आकाशगंगा। पृथ्वीतत्त्वसे

जो शक्ति प्राप्य है, वह पातालगंगा है, जलीयतत्त्वसे वही शक्ति भागीरथी है और तेज तत्त्वसे वही आकाशगंगा है, जिस प्रकार गायत्री त्रिपक्ष है, उसी प्रकार गंगा भी

गयी है। अग्नि अथवा तेज तत्त्व जलमें रहनेवाला है। अग्निका जन्म जलसे बताया गया है। जलका मूल तत्त्व पार्थिव है। जो भेषजमय है और जिससे मनुष्यको

जीविका भी प्राप्त होती है। इस प्रकार 'आप: 'के तीन

रूप हो जाते हैं। ये ही गंगाके तीन रूप हैं।

भाग ९१

🗱 पतितपावनी गंगा, यमुना एवं सरयूमैयाके पवित्र जलका पान करो, यह अक्षय पुण्यका सूत्र है। 🗱 जहाँतक हो अनन्य विश्वास और श्रद्धाके

साथ अपने दैनिक कर्तव्योंके साथ-साथ भगवद्भजन अवश्य करो।

📽 स्नान करनेसे शरीरकी शुद्धि, दान करनेसे धनकी शुद्धि और ध्यान करनेसे मनकी शुद्धि होती है।

📽 नित्यप्रति ब्राह्ममुहूर्तमें जगकर गंगादि पवित्र नदियोंके जलसे स्नानादि क्रिया सम्पन्नकर सन्ध्यावन्दन,

गायत्रीजप, भजन-पूजन पाठादि नियमसे करो। 📽 तुलसी, पीपल, बिल्व, आँवलादि पवित्र वृक्षों तथा गंगादि नदियोंका नित्य दर्शन-पूजन करो।

📽 धरतीमें तुम जैसा बीज बोओगे, उसीके अनुरूप फलकी प्राप्ति होगी। अगर तुमने बबूलका पेड़ लगाया तो क्या तुम्हें आमके फल प्राप्त होंगे ? कदापि नहीं। इसी

दुर्गुणों और दुराचारोंका बीज बोओगे तो जीवन दु:ख और अशान्तिसे भर जायगा। तुम्हें सुख और शान्तिकी प्राप्ति नहीं होगी, इसलिये अपने अन्त:करणमें सदाचारके

प्रकार अन्त:करण भी धरतीके समान है। इसमें अगर

बीज लगाओ, जिससे पावन हो जाओगे। फिर अन्त:करणमें भगवत्प्रेमकी ज्योति जाग्रत् होगी, जिससे मानव-जीवनके त्रिधारा है। ऋग्वेदमें आप: को अन्तरिक्षका देवता कहा लक्ष्यको प्राप्तकर मुक्त हो जाओगे।

ज्योतिर्लिग-परिचय द्वादश ज्योतिर्लिगोंके अर्चा-विग्रह

## [गताङ्क ४ पृ०-सं० ३१ से आगे]

### (४) श्रीओंकारेश्वर या ममलेश्वर यहाँ कौन-सी कमी देखी है ? आपके इस तरह लम्बी

साँस खींचनेका क्या कारण है ?'

नारदजीने कहा-भैया! तुम्हारे यहाँ सब कुछ है।

ऐसा कहकर नारदजी वहाँसे जिस तरह आये थे,

फिर मेरु पर्वत तुमसे बहुत ऊँचा है। उसके शिखरोंका विभाग देवताओं के लोकों में भी पहुँचा हुआ है। किंतु तुम्हारे शिखरका भाग वहाँ कभी नहीं पहुँच सका है।

उसी तरह चल दिये, परंतु विन्ध्यपर्वत 'मेरे जीवन आदिको धिक्कार है' ऐसा सोचता हुआ मन-ही-मन संतप्त हो उठा। अच्छा, 'अब मैं विश्वनाथ भगवान शम्भुकी आराधनापूर्वक तपस्या करूँगा' ऐसा हार्दिक निश्चय करके वह भगवान् शंकरकी शरणमें गया। तदनन्तर जहाँ साक्षात् ओंकारकी स्थिति है, वहाँ प्रसन्नतापूर्वक जाकर उसने

शिवकी पार्थिवमूर्ति बनायी और छ: मासतक निरन्तर

शम्भुकी आराधना करके शिवके ध्यानमें तत्पर हो वह

अपनी तपस्याके स्थानसे हिलातक नहीं। विन्ध्याचलकी ऐसी तपस्या देखकर पार्वतीपित प्रसन्न हो गये। उन्होंने

विन्ध्याचलको अपना वह स्वरूप दिखाया, जो योगियोंके

लिये भी दुर्लभ है। वे प्रसन्न हो उस समय उससे बोले-

'विन्ध्य! तुम मनोवांछित वर माँगो। मैं भक्तोंको अभीष्ट

भक्तवत्सल हैं। यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मुझे वह अभीष्ट बुद्धि प्रदान कीजिये, जो अपने कार्यको सिद्ध

विन्ध्य बोला-देवेश्वर शम्भो! आप सदा ही

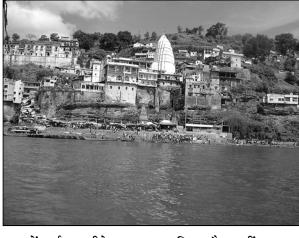
भगवान् शम्भुने उसे वह उत्तम वर दे दिया और

वर देनेवाला हूँ और तुम्हारी तपस्यासे प्रसन्न हूँ।'

द्वादश ज्योतिर्लिगोंके अर्चा-विग्रह

### ( अमरेश्वर ) भगवान शिवका यह परम पवित्र विग्रह मालवा-

संख्या ५ ]



प्रान्तमें नर्मदा नदीके तटपर अवस्थित है। यहीं मान्धाता पर्वतके ऊपर देवाधिदेव शिव ओंकारेश्वररूपमें विराजमान हैं। शिवपुराणमें श्रीओंकारेश्वर तथा श्रीअमलेश्वरके\*

ओंकारेश्वर और परमेश्वर (अमलेश्वर) ज्योतिर्लिंगके प्राकट्यकी कथा इस प्रकार है—एक समयकी बात है,

दर्शनका अत्यन्त माहात्म्य वर्णित है।

नारद मुनि गोकर्ण नामक क्षेत्रमें विराजमान भगवान् शिवके समीप जा बड़ी भक्तिके साथ उनकी सेवा करने लगे। कुछ

कालके बाद वे मुनिश्रेष्ठ वहाँसे गिरिराज विन्ध्यपर आये

और विन्ध्यने वहाँ बड़े आदरके साथ उनका पूजन किया।

'मेरे यहाँ सब कुछ है, कभी किसी बातकी कमी नहीं होती है', इस भावको मनमें लेकर विन्ध्याचल नारदजीके

सामने खड़ा हो गया। उसकी वह अभिमानभरी बात सुनकर

अहंकारनाशक नारद मुनि लम्बी साँस खींचकर चुपचाप

खड़े रह गये। यह देख विन्ध्यपर्वतने पूछा—'आपने मेरे

कहा—'पर्वतराज विन्ध्य! तुम जैसा चाहो, वैसा करो।' इसी समय देवता तथा निर्मल अन्त:करणवाले ऋषि वहाँ

करनेवाली हो।

\* द्वादशज्योतिर्लिगोंमें ओंकारेश्वर तो है ही, परंतु उसके साथ अमलेश्वरका भी नाम लिया जाता है। वस्तुत: नाम ही नहीं—इन दोनोंका

अस्तित्व भी पृथक्-पृथक् है। अमलेश्वरका मन्दिर नर्मदाके दक्षिण किनारेकी बस्तीमें है। पर इन दोनों ही शिव-रूपोंकी गणना प्राय: एकमें

ही की गयी है। कहा जाता है कि एक बार विन्ध्यपर्वतने पार्थिवार्चनसहित ओंकारनाथकी छ: मासतक विकट आराधना की, जिससे प्रसन्न होकर भगवान् शिवजी प्रकट हुए। उन्होंने विन्ध्यपर्वतको मनोवांछित वर प्रदान किया। उसी समय वहाँ पधारे हुए देवों एवं ऋषियोंकी प्रार्थनापर

उन्होंने 'ॐकार' नामक लिंगके दो भाग किये। इनमेंसे एकमें वे प्रणवरूपसे विराजे, जिससे उनका नाम ओंकारेश्वर पडा तथा पार्थिवलिंगसे

सम्भृत भगवान् सदाशिव परमेश्वर, अमरेश्वर या अमलेश्वर नामसे प्रख्यात हुए।

यहाँ स्थिररूपसे निवास करें।' देवताओंको यह बात सुनकर परमेश्वर शिव प्रसन्न हो गये और लोकोंको सुख देनेके लिये उन्होंने सहर्ष

आये और शंकरजीकी पूजा करके बोले—'प्रभो! आप

वैसा ही किया, वहाँ जो एक ही ओंकारलिंग था, वह दो स्वरूपोंमें विभक्त हो गया। प्रणवमें जो सदाशिव थे.

वे ओंकार नामसे विख्यात हुए और पार्थिवमूर्तिमें जो शिव-ज्योति प्रतिष्ठित हुई, उसकी परमेश्वर संज्ञा हुई (परमेश्वरको ही अमलेश्वर भी कहते हैं)। इस प्रकार

ओंकार और परमेश्वर-ये दोनों शिवलिंग भक्तोंको अभीष्ट फल प्रदान करनेवाले हैं। प्रसिद्ध सूर्यवंशीय राजा मान्धाताने, जिनके पुत्र अम्बरीष और मुचुकुन्द दोनों प्रसिद्ध भगवद्भक्त हो गये हैं तथा जो स्वयं बडे तपस्वी और यज्ञोंके कर्ता थे, इस स्थानपर घोर

इस पर्वतका नाम मान्धाता-पर्वत पड़ गया। मन्दिरमें प्रवेश करनेसे पूर्व दो कोठरियोंमेंसे होकर जाना पड़ता है। भीतर अँधेरा रहनेके कारण सदैव दीप जलता रहता है। ओंकारेश्वर-लिंग गढ़ा हुआ नहीं है—

तपस्या करके भगवान् शंकरको प्रसन्न किया था। इसीसे

प्राकृतिक रूपमें है। इसके चारों ओर सदा जल भरा रहता है। इस लिंगकी एक विशेषता यह भी है कि वह मन्दिरके गुम्बजके नीचे नहीं है। शिखरपर ही भगवान् शिवकी प्रतिमा विराजमान है। पर्वतसे आवृत यह मन्दिर

पूर्णिमाको इस स्थानपर बड़ा भारी मेला लगता है। (५) श्रीकेदारेश्वर

साक्षात् ओंकारस्वरूप ही दृष्टिगत होता है। कार्तिक-

# केदारनाथ पर्वतराज हिमालयके केदार नामक

भक्तोंको मनोवांछित फलकी प्राप्ति होती है। सत्ययुगमें उपमन्युजीने यहीं भगवान् शंकरकी आराधना की थी। द्वापरमें पाण्डवोंने यहाँ तपस्या की।

शृंगपर अवस्थित हैं। शिखरके पूर्व अलकनन्दाके सुरम्य

तटपर बदरीनारायण अवस्थित हैं और पश्चिममें मन्दािकनीके

किनारे श्रीकेदारनाथ विराजमान हैं। यह स्थान हरिद्वारसे

लगभग १५० मील और ऋषिकेशसे १३२ मील उत्तर

है। भगवान् विष्णुके अवतार नर-नारायणने भरतखण्डके

बदरिकाश्रममें तप किया था। वे नित्य पार्थिव शिवलिंगकी

पूजा किया करते थे और भगवान् शिव नित्य ही उस

अर्चालिंगमें आते थे। कालान्तरमें आशुतोष भगवान्

शिव प्रसन्न होकर प्रकट हो गये। उन्होंने नर-नारायणसे

कहा—'मैं आपकी आराधनासे प्रसन्न हुँ, आप अपना वांछित वर माँग लें।' नर-नारायणने कहा—'देवेश!

यदि आप प्रसन्न हैं और वर देना चाहते हैं तो आप

अपने स्वरूपसे यहीं प्रतिष्ठित हो जायँ, पूजा-अर्चाको

प्राप्त करते रहें एवं भक्तोंके दु:खोंको दूर करते रहें।'

उनके इस प्रकार कहनेपर ज्योतिर्लिंगरूपसे भगवान् शंकर

केदारमें स्वयं प्रतिष्ठित हो गये। तदनन्तर नर-नारायणने

उनकी अर्चना की। उसी समयसे वे वहाँ 'केदारेश्वर' नामसे विख्यात हो गये। 'केदारेश्वर' के दर्शन-पूजनसे

भाग ९१

केदारनाथमें भगवान् शंकरका नित्य-सान्निध्य बताया गया है और यहाँके दर्शनोंकी बड़ी महिमा गायी

गयी है।

	मामा प्रयागदासजी इंडेंडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेडेड				
संत-चरित— मामा प्रयागदासजी					
जनकपुरमें एक विधवा ब्राह्मणी रहती थी, लगभग सवा दो सौ वर्ष पूर्व। उसके एक पुत्र था। उसका नाम था प्रयागदत्त। बालक प्राय: पूछता—'माँ! क्या मेरे और कोई नहीं है? जनकपुरकी स्त्रियाँ श्रीजानकीजीको अपनी पुत्री या बहन मानती हैं। वह ब्राह्मणी कहती— 'बेटा! तुम्हारे एक बहन है। वह अयोध्याके चक्रवर्ती महाराजके राजकुमारको ब्याही है।' बालक कहता— 'मैं बहनके पास जाऊँगा।' माता कहती—'कुछ बड़े होनेपर जाना।' बालकके मनपर अपने बहन-बहनोईका संस्कार पूरी तरह बैठ गया। कुछ बड़े होते ही उसने अयोध्या जानेकी हठ पकड़ ली। ब्राह्मणी भक्ता थी। उसने	गया है। उसपर सोनेकी रत्नजटित अम्बारी पड़ी है। हाथी बैठ गया और उसमेंसे बहनोईके साथ बहन उतर पड़ी। किसीको कोई परिचय देना या पूछना नहीं पड़ा। जैसे ये सदाके परिचित ही हों। श्रीजानकीजीने पूछा—'भैया! माताजीने मेरे लिये कुछ भेजा है?' भैया तो हक्के-बक्के देखते ही रह गये। कुछ देरमें सावधान होकर पोटली देते हुए बोले—'मैंने तो तुमलोगोंको बहुत ढूँढ़ा। कोई तुमलोगोंका पता नहीं बताता था।' पोटलीमेंसे श्रीकिशोरीजीने दो कासार ले लिये और शेष प्रयागदत्तको खानेके लिये दे दिया। कहा—'भैया! तुम्हें बड़ा कष्ट हुआ। हमलोग ऐसे स्थानपर रहते हैं कि सब लोग हमारा पता नहीं जानते।				
सोचा—'मिथिलेशराजकुमारी क्या अपने इस अबोध भाईकी उपेक्षा कर सकती हैं ?' उस बेचारीके पास घरमें	अब तुम घर लौट जाओ। मातासे कहना कि हम सब बड़े आनन्दमें हैं।' वे हाथीपर बैठ गये। हाथी वनमें				
तो कुछ था नहीं। माँगकर थोड़ेसे चावलके कण ले आयी। उन्हें पीसकर उनके मीठे मोदक बना दिये। ऐसे मोदकोंको मिथिलामें 'कासार' कहते हैं। उनको एक कपड़ेमें बाँधकर पुत्रको दिया और कहा—'ये अपनी बहन और जीजाजीको दे देना।' लड़केको मार्गमें खानेके लिये उसने सत्तू दे दिये।	जाकर अदृश्य हो गया।  प्रयागदत्त बहन-बहनोईके वियोगमें मूर्छित हो गये। कुछ देरमें कुछ चेतना आयी। उसी समय एक संत उधरसे निकले। पास जाकर उन्होंने देखा कि एक सुन्दर बालक भूमिपर पड़ा तड़प रहा है। प्रयागदत्तको किसी प्रकार वे अपनी गुफापर ले आये। स्वस्थिचित्त होनेपर				
बालक प्रयागदत्त किसी प्रकार कुछ दिनमें अयोध्या पहुँचे। यहाँ पूछनेपर भी कोई उनके चक्रवर्ती बहनोईका	प्रयागदत्तने सब बातें बतायीं। एक घड़ी रात गये दो स्त्रियाँ आयीं और उन महात्माजीको दो थाल व्यंजनोंसे				
पहुंच। यहा पूछनपर भा काइ उनक चक्रवता बहनाइका पता नहीं बतलाता था। जिससे पूछते, वही हँस देता। बहुत परेशान हुए। थककर मणिपर्वतके पास सहस्रशीर्षा मन्दिर (यह आजकल मस्जिद है)-के पास घने पेड़ोंके	भिरं देकर उन्होंने कहा—'आज हमारे यहाँ पूजा हुई है। आपके लिये यह प्रसाद लायी हैं। अभी इसे ले लीजिये, थाल सबेरे चले जायँगे।' थाल देकर वे शीघ्रतासे चली				
मध्यमें एक टीलेपर बैठ गये। बहुत थक गये थे। बहनोईपर बहुत अप्रसन्न हो रहे थे। कह रहे थे—'पता नहीं कहाँ चला गया? अब उसे कहाँ ढूँढ़ने जाऊँ?' भला, कोई उन चक्रवर्ती-राजकुमारको कहाँ ढूँढ़े।	गयीं ? दोनों थाल कमलके पत्तोंसे ढके थे। पत्ते हटानेपर महात्माजी तो चिकत रह गये। स्वर्णके वे थाल जगमग कर रहे थे। महात्माजीने समझ लिया कि जगज्जननीने अपने भाईकी पहुनाई की है।				
मला, फाइ उन पक्रपता-राजकुमारका कहा ढूढ़ा परंतु जो सचमुच उन्हें ढूँढ़ता है, ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहाँ वे उसे न मिल जायँ। प्रयागदत्तने देखा कि खूब बड़ा एक सफेद हाथी उनके सामने टीलेपर कहींसे आ	वह दिव्य भोग प्रयागदत्तके कारण महात्माजीको भी प्राप्त हुआ। प्रात: थाल लेने तो कौन आनेवाला था। महात्माजीने प्रयागदत्तको थाल देना चाहा तो वे बोले—				

'मेरी माँ मुझे घरसे ही निकाल देगी, यदि मैं बहनकी चीज नहीं किसने सिखा दिया कि सभी बच्चे इन परमहंसको 'मामा-मामा' कहने लगे। ये परमहंस मामा मत्तगजेन्द्रकी ले जाऊँ। वह कन्याकी वस्तु कैसे लेगी?' बाबाजी भी सच्चे विरक्त थे। उन्होंने थालोंको गणेशकुण्डमें फेंक दिया। भाँति झुमते हुए अयोध्याकी गलियोंमें घूमते रहते थे। प्रयागदत्त घर पहुँचे। पुत्रका समाचार सुनकर माता चिकत एक बार प्रयागदासजीको श्रीरामकी वन-लीलाका रह गयी। उसके नेत्रोंसे अश्रुधारा चलने लगी। बोध हुआ। कहने लगे—'देखो! अपने तो गया ही, इस घटनाके एक वर्ष बीतनेपर प्रयागदत्तकी माता साथमें मेरी सुकुमारी बहनको भी बीहड़ वनमें ले गया।'

बहनोई बस गये थे। संसारमें कोई वस्तु आँख उठाकर देखनेयोग्य भी उन्हें नहीं जान पड़ती थी। वे घर छोड़कर सीधे अयोध्याको चल पडे। अयोध्या पहुँचकर प्रयागदत्तकी अद्भुत दशा हो गयी। शरीरकी सुधि ही भूल गयी। उन्हें बहन-बहनोईके दर्शनोंके लिये वे व्याकुल हो गये। जिस टीलेपर पहले दर्शन हुए थे, कुछ देर वहीं जाकर प्रतीक्षा करते रहे। उसके बाद कुंजों और झाडियोंमें ढूँढते हुए भटकने लगे। इसी दशामें पूर्व-परिचित संत त्रिलोचन स्वामी इन्हें मिले। महात्माजीने इन्हें पहचाना और अपने आश्रमपर ले आये।

समस्त संसारके मामा लगते हैं। अयोध्यामें श्रीवैदेहीके

उसीको देख रहे हैं एकटक।

परमधाम चली गयीं। पासके एक ग्रामके सम्पन्न ब्राह्मण

इनके साथ अपनी कन्याका विवाह करनेको उत्सुक थे।

उनके कोई पुत्र नहीं था, अतः प्रयागदत्तको वे अपने ही

घर रखना चाहते थे, लेकिन प्रयागदत्तको किसीके

धनका मोह कहाँ था। उनके मनमें तो वे दिव्य बहन-

तीनों पलंग बिछाये। उनपर गद्दे डाल दिये। उनके नीचे एक-एक जोड़ी जूते रख दिये और अब बहन-बहनोईको ढूँढ़ने लगे। जब बहुत ढूँढ चुके, तब बोले— 'देखो! छिप गया न। जान गया कि प्रयागदास आ गया श्रीत्रिलोचन स्वामीजीके सत्संगका अपूर्व प्रभाव पड़ा। दूसरे दिन उन्हींसे दीक्षा ग्रहण करके अब ये प्रयागदास हो गये। गुरुने इन्हें लॅंगोटी-ॲंचला प्रदान किया। उसके बाद तो प्रयागदासजीकी स्थिति बहुत ही ऊँची हो गयी। वे वन-बीहड़में कहाँ घूम रहे हैं, सो उन्हें कुछ पता नहीं। किसीने खिला दिया तो खा लिया, जल पिला दिया तो पी लिया। केश बिखरे हैं, शरीर धूलिसे भरा है। कहीं खड़े हो गये तो घंटों खड़े हैं। किसी वस्तुकी ओर दृष्टि गयी तो जगन्माता भगवती लक्ष्मीके भाई होनेसे चन्द्रदेव है।' लौटकर देखते हैं तो इनके पलंगपर श्रीराम, लक्ष्मण

तथा जानकीजी विराजमान हैं। दौड़कर सबके चरणोंमें

अब आपको एक धुन सवार हुई। कोई पैसे देता तो ले

लेते। कुछ दिनोंमें पर्याप्त पैसे एकत्र हो जानेपर तीन

जोड़ी जूते बनवाये, जितने बढ़िया बनवा सकते थे। तीन

पलंग ऐसे बनवाये छोटे, बडे कि एकके पेटमें एक रखा

जा सके। तीनों पलंगोंके लिये तीन गद्दे बनवाये। अब

एकपर एक क्रमशः तीनों पलंग रखकर उनपर तीनों गद्दे

और तीनों जोड़ी जूते रख लिये और यह सब सामान

सिरपर उठाकर चित्रकूट चल पड़े। जहाँ-जहाँ मार्गमें

गड्ढे, कुश, काँटे, कंकड़ मिलते, वहाँ अपने बहनोईको

चित्रकूट पहुँचकर स्फटिकशिलाके पास प्रयागदासजीने

वे कोसते जाते थे।

भिन्न के के कि के अधिक प्रमुख्य के स्थापक के सामित हैं। त्री के इस अपने अपने स्थापक के स्थापक क

िभाग ९१

संख्या ५ ] इस जंगलमें क्यों चले आये? मेरी सुकुमारी बहनको भाली है। वह जो कहता है, वही करती है। साथ-साथ क्यों साथ ले आये ? इस बीहड वनमें तुमलोग रहते कैसे चली आयी। हरे-भरे पेड, लताएँ, मृग देखती है, खुश हो हो ?' श्रीजानकीजीने कहा—' भैया! मैं तो स्वयं आयी। जाती है। किसी दिन बाघ देखेगी तो जानेगी! मुझे भी साथ नहीं लिया। समझता है कि प्रयागदास साथ रहेगा तो ये तो मुझे लाते ही नहीं थे।' प्रयागदासजीने कहा— 'अच्छा, ठीक है। अब हम तुम्हारे साथ-साथ रहेंगे और इसकी बहन सचेत हो जायगी। अयोध्या लौटनेको कहेगी। पलंग ले चला करेंगे।' इस प्रकार खीझते, बकते वे अयोध्या लौट आये। श्रीरघुनाथजीने कहा—'भाई! हमारी वन-यात्राका अयोध्या लौटकर उन्होंने एक नीमके नीचे खाट बिछायी, उसपर गद्दे डाले और उसपर स्वयं आसीन

नियम है कि हम तीन ही साथ रहते हैं। चौथे किसीको साथ नहीं रखते। पलंगपर कभी हम बैठते नहीं, आज तो तुम्हारी प्रसन्नताके लिये बैठ गये। अब तुम इनको अयोध्या ले जाओ। तुम इनको अपने काममें लोगे तो हमको बडा सुख मिलेगा।' श्रीजानकीजीने भी इन्हें आश्वासन देकर लौट जानेको

कहा। सिरपर फिर पूर्ववत् पलंग और गद्दे रखकर बेचारे लौट पड़े। मन-ही-मन कहते जाते थे—'इनको किसीने कुछ कहा नहीं, ये सब आप ही वनमें आये हैं। सोनेका महल काटता है, वन अच्छा लगता है। बहन तो भोली-

उनकी बहन हैं। उनकी मस्ती अनन्त, अखण्ड, नित्य नृतन है। उनकी वाणियोंमें उस मस्तीकी एक झलक पायी जाती है।

होकर अपनी मस्तीमें गाने लगे—

नीमके नीचे खाट बिछी है, खाटके नीचे करवा।

प्रागदास अलमस्ता सोवै, रामललाका सरवा॥

निखिल-ब्रह्माण्डनायकके साले जो ठहरे। उत्पत्ति-

स्थित-संहारकारिणी सकल क्लेशहारिणी महाशक्ति

प्रयागदासजीकी अलमस्तीका क्या पृछना! वे

## ( श्रीमती डॉ० उर्मिला किशोरजी ) हे प्रभु! मानव ने अर्चन को, बनवाये हैं मन्दिर अनेक।

सर्वत्र व्याप्त है, परम प्रभो! सब जीवों में तू बैठा है। तू है प्रणम्य सब रूपों में, तू सबका वन्दन लेता है॥

तुझ निराकार निर्गुण के हित, बनवाये हैं साकार भवन।

मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर हैं, श्री गुरुद्वारे हैं, पूजास्थल।।

है व्याप्त वहाँ भी मेरा प्रभु, लेता वन्दन, अर्चन सबका।

जो जिस भी भाव पूजता है, देता तू वैसा फल उसका॥

तू निराकार साकार प्रभो! निर्गुण भी, सदा सगुण भी है।

प्रतिमा विग्रह में अर्चन ले, मन-मन्दिर में तू बसता है।।

यह विनत निवेदन है प्रभु से, मुझ को ऐसी दृढ़ मित दे दे।

तेरा ही रूप चराचर है, तुझ को सब जीवों में देखें॥ जब तू ही है सब जीवों में, सब प्रेम-पात्र हैं, माननीय।

सब सुखी रहें, तू हो प्रसन्न, सब में अर्चित तू अर्चनीय॥

तू भाव भक्ति का भूखा है, तू प्रेम-सुधा का प्यासा है। जो प्रेम भक्ति से भजते हैं, उनका अर्चन ही भाता है॥

जो एक-एक से बढ़कर हैं, वे शिल्प-कला की भव्य रेख॥ कुछ में बैठायी मूर्ति, प्रभो! जो सुन्दर है, प्रतीक प्रभु का। है साज-बाज अनुपम सुन्दर, हरता रहता है मन सबका॥ हे! परम कृपालु! बसा है तू, उन भव्य विशाल मन्दिरों में। षोडश उपचार सहित पूजन, लेता है अपने भक्तों से॥

उनके भवनों में भी बैठा, तू सुन्दर प्रतिमा-विग्रह में। उनकी भी भाव-भक्ति को तू, स्वीकार कर रहा अर्चन में।।

अक्षत, रोली, चन्दन, दीपक, के बिन पूजें जो जन मन से। उनकी भी मानस पूजा को, तू लेता है, हे! प्रभु सुख से॥

दु:ख है क्या ? ( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज ) वास्तवमें कामनाओंकी अपूर्ति दु:ख है और कर्मोंके फलके रूपमें तो परिस्थिति प्राप्त होती है। उनमें कामनाओंको पूर्ति सुख है। सुख-दु:ख परिस्थितिमात्र सुख और दु:ख तो मनुष्यके भावानुसार होते हैं। है—अनुकूल परिस्थिति सुख है और प्रतिकूल परिस्थिति 'विवेकशील मनुष्य भयंकर परिस्थितिमें दुखी नहीं दु:ख है। यहाँ चर्चा केवल दु:खकी की जा रही है। होता अपितु उसको अपनी उन्नतिका हेतु समझकर हम सभीके जीवनमें किसी-न-किसी अंशमें कभी उसका सदुपयोग करता है तथा सब प्रकारकी परिस्थितियोंको परिवर्तनशील, अनित्य और अपूर्ण समझकर परिस्थितियोंसे दु:ख अनिवार्य रूपसे आता ही है, इसलिये यह प्रश्न उठता है कि आखिर दु:ख है क्या? जब वह हमारे ऊपरका जीवन प्राप्त करनेके लिये, उनसे असंग हो जीवनमें आता है तो हम विह्वल हो जाते हैं, अधीर होते जाता है। हैं और अपनेको अभागा कहते हैं, भाग्यको कोसते हैं जीवनमें दु:ख आया और उससे हम विकल हो या ईश्वरको कोसते हैं-उन्हें निष्ठुर और हृदयहीन गये, अधीर हो गये, अपनेको अभागा कहने लगे और कहते हैं। ईश्वरपर दोष मढ़ने लगे तो यह 'दु:खका भोग' है और परंतु भाग्य स्वयंमें तो कुछ है नहीं। हमारे कर्मीसे सुष्टिका अनिवार्य स्वरूप समझकर सजग और सचेत हो प्रारब्ध कहें या भाग्य कहें, बनता है। इसलिये भाग्यका जाते हैं तो इसे 'दु:खका प्रभाव' कहा है। अनिवार्य क्या दोष है ? दोष तो हमारा और हमारे कर्मोंका ही है। स्वरूप यों कि उदाहरणके लिये यदि किसीका संयोग कभी-कभी लोग ऐसा भी कहते हैं कि हमने तो है तो आगे-पीछे किसी-न-किसी समय वियोग होगा ही। किसीका शरीर अमर नहीं होता। सृष्टिमें जो कुछ जाने-अनजाने कोई गलत कार्य नहीं किया, किसीको सताया नहीं, तो फिर हमारे साथ ऐसा क्यों हुआ? यहाँ भी उत्पन्न होता है, उसका नाश भी होता ही है। हमसे भूल हो जाती है कि हमारा प्रारब्ध केवल इसी यदि दु:खके भोगी हैं तो दु:ख अभिशाप है। यदि जन्मके कर्मोंका फल नहीं, बल्कि पूर्वके जन्म-जन्मान्तरके उसके प्रभावको अपनाते हैं तो वह वरदान है। इससे संचित कर्मोंका फल है। उसीके अनुसार अनुकूल या हमारा उत्तरोत्तर विकास होता है और हम सुख-दु:खसे प्रतिकूल परिस्थितियाँ हमारे जीवनमें आयेंगी ही। अतीत जीवनमें प्रवेश पाते हैं। दु:खके मांगलिक पक्षको यदि हम दु:खको ईश्वरद्वारा प्रदत्त सजा कहें, तो 'दु:खका प्रभाव' कहा है। वह भी उचित नहीं है। ईश्वरने अपनी मौजमें सृष्टि इसे सुनकर सामान्यत: हम चौंकेंगे और कहेंगे कि बनायी और उसका एक विधान बना दिया। उसी दु:ख वरदान या मांगलिक कैसे हो सकता है ? परंतु है विधानसे समस्त सुष्टि संचालित हो रही है। प्रभू यह सत्य।

मंगलकारी हैं और उनका विधान भी मंगलमय है— जब कोई दु:खको आनेसे रोक नहीं सकता, वह इसिलये न तो उन्हें दोष दे सकते हैं और न ही उनके जब आना है तब आयेगा ही, कोई बच नहीं सकता, विधानको। तो बुद्धिमत्ता इसीमें है कि दु:खके प्रभावको अपनाया कुछ लोग सुख और दु:खको कर्मींका फल मानते जाय। हैं। परंतु वास्तवमें कर्मींका फल सुख-दु:ख नहीं है। [प्रस्तुति—साधन-सूत्र: श्रीहरिमोहनजी]

संख्या ५ ] गोभक्त रामसिंह गोभक्त रामसिंह ( मुखिया श्रीविद्यासागरजी ) रामसिंह—किस समय? (१) सबलगढ तहसीलके फाटकपर रहीम सिपाही बैठा रहीम-रातके बारह बजे। था। तबतक भीतरसे रामसिंह सिपाही एक रोटी और रामसिंह—ग्यारह बजेसे मेरा पहरा है। उसीपर कुछ खीर रखे बाहर निकला। रहीम—तब तो तुम अपनी आँखोंसे, रहीम—कहो रामसिंह! यह रोटी और खीर कहाँ गोमाताको जबह होते देखोगे। लिये जा रहे हो? रामसिंह—यह बात सब अहलकारोंने पास कर दी रामसिंह—यह 'अग्रासन' है। है कि तहसीलमें गोकुशी हो? रहीम—जी हाँ। ठाकुर साहब! सब अफसर रहीम-इसके क्या मानी? रामसिंह — हमलोग जब रोटी बनाते हैं, तब पहली मुसलमान हैं। यह बात तय हो चुकी है। रोटी गोमाताके लिये ही बनाते हैं। उसको 'अग्रासन' रामसिंह—मेरे सामने गोकुशी हो, यह बात असम्भव कहा जाता है। है। नामुमिकन है रहीम! रहीम—मैं खुद अपने हाथसे गायके गलेपर छुरी रहीम-तुम रोटी खा चुके? रामसिंह—पहले गोमाताको खिला लूँगा, तब चलाऊँगा। कहीं मैं चौकेमें पैर रखूँगा। रामसिंह—मगर सिरपर कफन बाँधकर आना। रहीम—देखूँगा कि तुम क्या करते हो? रहीम - तुम गायको माता मानते हो? रामसिंह—माता! माता ही नहीं, जगन्माता! तुम्हारे मुसलमान धर्ममें भी कहा है कि यह पृथ्वी गायके रातके ग्यारह बजे रामसिंह सिपाही वरदी पहनकर सींगपर रखी है। और हाथमें भरी हुई दुनाली लेकर खजानेका पहरा देने रहीम—तुम्हारा इष्टदेव कौन है? तुम किसकी लगा। वहाँपर बारह बन्दुकें और भी रखी थीं। पाँच गारदके सिपाहियोंकी और सात थानेके सिपाहियोंकी। पुजा करते हो? रामसिंह—मेरी इष्टदेवी गाय है। मैं गायकी ही सभी भरी हुई थीं और दुनाली थीं। आधा घण्टेके बाद पूजा करता हूँ। बैतरनीकी नाव वही है। एक जवान और सुन्दर गायको लेकर रहीम आया। उसने आँगनके एक खूँटेपर गाय बाँध दी और छुरीकी रहीम—आज तुम्हारी गोभक्ति देखी जायगी! रामसिंह-कैसे? धार देखने लगा। ऑगनभरमें कुर्सियाँ बिछायी गयीं। तहसीलदार, नायब रहीम-तुम जानते हो कि आज ईद है। रामसिंह—जानता हुँ, फिर? तहसीलदार, थानेदार और दीवानजी आकर उन कुर्सियोंपर रहीम—यह जानते हो कि इस समय तहसीलदार, बैठ गये। शहरके कुछ धनी, मानी, रईस मुसलमान भी नायब तहसीलदार, थानेदार, दीवान और कई सिपाही आकर बैठ गये। सबलोग चौदहकी संख्यामें थे। सात मुसलमान सिपाही पीछे खड़े थे। एक मौलवीने उठकर मुसलमान हैं। रामसिंह—यह भी जानता हूँ। फिर? जबहकी दुआ पढ़ी। छुरी लेकर रहीम आगे बढ़ा। रहीम—इस तहसीलके अहातेमें ही थाना भी है, (3) यह मालूम है? रामसिंह—खबरदार रहीम! खबरदार! रामसिंह—मालूम है। फिर? रहीम—क्या बकते हो? रामसिंह - चनेके धोखे मिर्च मत चबाना। रहीम—तहसील और थानेके बीचमें जो आँगन है, उसीमें गोकुशी की जायगी। रहीम-चुप रहो।

भाग ९१ रामसिंह—तहसीलदार साहब! यह तहसील केवल विराम कहाँ, तडातड गोली चल रही थी, निशाना मुसलमानोंकी तहसील नहीं है। इस तहसीलमें हिन्दूलोगोंका अचुक था। ग्यारह आदमी जानसे मारे गये। भी साझा है। इसके बाद रामसिंहने गोमाताके चरण छुए और रस्सी खोल दी, वह बाहर भाग गयी। तब रामसिंहने एक गोली तहसीलदार—इसका मतलब? रामसिंह—मतलब यह कि तहसीलके भीतर गोकुशी अपनी छातीमें मार ली और मरकर वहीं गिर पडे। सबेरा हुआ। सारा सामाचार शहरमें फैल गया। नहीं हो सकती। तहसीलदार—मेरा हुक्म है। हिंदू पब्लिकने रामसिंहकी अर्थी बनायी। एक सेठजीने लाशपर पाँच सौ रुपयेका दुशाला डाल दिया। चार रामसिंह—आपका हुक्म कोई चीज नहीं। कलक्टरका हुक्म दिखलाइये। साधुओंने लाशमें कन्धा लगाया। शहरके हलवाइयोंने बतासे जमा किये। सराफोंने पैसे जमा किये। धनिकोंने तहसीलदार—अपनी तहसीलका मैं ही कलक्टर हैं। तहसील सबलगढका मैं जार्ज पंचम हैं। समझे? पैसे और रेजगारी इकट्ठी की। माली लोगोंने फुल इकट्ठे रामसिंह—चाहे आप साक्षात् खुदा ही क्यों न हों, किये। जब लाश चली तो आगे-आगे कुर्बानीवाली गाय पर मेरे सामने ऐसा हरगिज नहीं होगा। सजाकर चलायी गयी; पीछे शंख, घण्टा और घडियालका नाद होने लगा। रास्तेमें फूल-बतासे, पैसा और रेजगारी थानेदार—होगा, होगा और बीच खेत होगा। हथियार रख दो और निकल जाओ तहसीलके बाहर। बरसायी जाने लगी। विराट् जुलूस निकाला गया। कई एक सहृदय मुसलमान और ईसाई सज्जन भी साथ थे। रामसिंह—मेरा हथियार कौन छीन सकता है? थानेदार—मैं! श्मशानपर जब लाश उतारी गयी, तब जनाब मुहम्मद-रामसिंह—आइये! छीनिये आकर! अली सौदागरने लाशपर गुलाबके फूल चढ़ाकर कहा— दीवान—क्या तुम्हारी आफत आ गयी है रामसिंह! ' हजरत मुहम्मद साहबने शरीफमें लिखा है कि उन जानवरोंको अपने अफसरसे ऐसी नाजायज गूफ्तगू! हरगिज न मारा जाय जो पब्लिकको आराम पहुँचाते हैं।' रामसिंह—अफसर! किस बेवकूफने इनको अफसर बादशाह अकबर और बादशाह जहाँगीरने कानून बनाकर बनाया ? पब्लिकका दिल दुखाना अफसरका काम नहीं है। गोकुशी बन्द कर दी थी। अफसोस है कि हमारे तअस्सुबी थानेदार—रहीम! अपना काम करो! काफिरको मुसलमान, सिर्फ हिन्दू भाइयोंका दिल दुखानेकी गरजसे बकने दो। रहीमने गायके पास जाकर ज्यों ही छुरा ऊँचा गोकुशी करते हैं। मैं उनपर लानत भेजता हूँ। किया, त्यों ही रामसिंहने दनसे गोली चला दी, रहीम पादरी यंग साहब ईसाई थे। उन्होंने कहा-'सरकार अगर गोकुशी कराती होती तो विलायतमें खूब मरकर गिर पडा। थानेदार—पकड़ो, पकड़ो! गोकुशी की जाती। मगर वहाँ इसका नामोनिशानतक रामसिंहने दूसरी गोली थानेदारकी छातीपर रसीद नहीं है। विलायतके सभी अंग्रेज किसान गायोंको पालते की। 'हाय' कहकर थानेदार भी वहीं ढेर हो गये। हैं। अफसोस है कि सिर्फ चमडेके व्यापारने गोकुशीका तहसीलदार उठकर भागने लगे। रामसिंहने खाली बुरा काम जारी रखा है। भाई रामसिंहकी बहादुरीकी मैं बन्द्रक वहीं डाल दी और लपककर दूसरी भरी दुनाली तारीफ करता हूँ। आप साहबानसे प्रार्थना करता हूँ कि ठाकुर रामसिंहके बाल-बच्चोंके वास्ते कुछ चंदा किया उठा ली। रामसिंह—कहाँ चले जार्ज पंचम! जरा अपनी जाय।' उसी समय पन्द्रह हजारका चन्दा लिखा गया। कलक्टरीकी चाशनी तो चख लो। उसमें सहृदय जनाब मुहम्मदअली साहबने तीन हजार इतना कहकर रामसिंहने घोडा दबाया। तहसीलदारकी और पादरी साहबने एक हजार रुपये दिये। खोपड़ीमें गोली लगी और वे वहीं ढेर हो गये। यह घटना अक्षरश: सत्य है। केवल नाम बदल Hinराष्ट्रिक्त प्राप्त अस्ति हुन्। Hinराष्ट्र अस्ति हुन्। Hinrium स्ति हुन। Hinrium स्ति हुन्। H

साधनोपयोगी पत्र संख्या ५ ] साधनोपयोगी पत्र फिर उनके आनेमें देर नहीं होती। द्रौपदीकी पुकारपर (8) भक्तकी सच्चे हृदयकी पुकार भगवान् अवश्य चीर बढ़ाना और द्वारकासे तुरंत वनमें पहुँचकर पाण्डवोंको सुनते हैं दुर्वासाके शापसे बचाना प्रसिद्ध ही है। प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपने एक पत्रमें नियमोंका पालन प्रेम और अति दृढताके साथ लिखा था कि अच्छी स्थितिमें भी भगवान्पर भरोसा नहीं करते रहें। कृपा तो भगवान्की है ही। उस कृपाका अनुभव करते ही मनुष्य भगवदिभमुखी हो सकता है। होता तब साधनकी शिथिलतामें तो हो ही कहाँसे, परंतु सदा प्रसन्न रहिये और भगवान्की कृपाका दृढ़ भरोसा अब ज्यादा निराशा नहीं होती। सो भगवान्पर भरोसा तो रखिये। भगवान्को नित्य अपने साथ मानिये, फिर पाप-अच्छी, बुरी सभी स्थितियोंमें रखना चाहिये। इसके सिवा ताप समीप भी नहीं आ सकते। ×××× निराश तो जरा और सहारा ही क्या है? बलवान् और निर्बल सभीके बल एक भगवान् ही हैं, परंतु अपनेको वास्तवमें निर्बल भी न होइये। भगवान्के बलका भरोसा करनेपर निराशा मानकर भगवान्के बलपर भरोसा रखनेवालेका बल तो कैसी? शेष प्रभुकृपा। भगवान् हैं ही। इस भगवान्के बलको पाकर वह अति (२) निर्बल भी महान् बलवान् हो सकता है—'मूकं करोति भगवत्साक्षात्कारके उपाय वाचालं पङ्गं लङ्घयते गिरिम्' प्रसिद्ध है। प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र मिला। आपके प्रश्नोंके उत्तर इस प्रकार हैं— भगवानुको पुकारनेभरकी देर है। बीमार बच्चा (१) उत्तम लेखोंके संग्रह करनेवाले तथा उत्तम बाहर बैठी हुई माँको पुकारे तो क्या माँ उसकी पुकार नहीं सुनती या कातर पुकार सुनकर भी आनेमें कभी देर लेख लिखनेवालोंको ईश्वरसाक्षात्कार होना ही चाहिये, करती है ? अवश्य ही यह बात होनी चाहिये कि माँ यह कोई बात नहीं है। लेख संग्रह करना और लिखना बाहर मौजूद हो और बच्चेकी सच्ची कातर-पुकार हो। तो परिश्रम, दक्षता, अध्ययन, अभ्यास तथा विद्यासे भी माँ मौजूद नहीं होगी तो बिना सुने कैसे आयेगी और हो सकता है। प्रभुका साक्षात्कार तो प्रेम-सच्चे प्रभु-बच्चेकी पुकार केवल बनावटी और विनोदभरी होगी तो प्रेमसे होता है। वहाँ विद्या, यज्ञ, दान, कर्म, तप आदिका माँ सुनकर भी अपनी आवश्यकता न समझकर नहीं इतना महत्त्व नहीं है, जितना प्रेमका है। वास्तवमें सत्य आयेगी। परंतु कातर पुकार सुननेपर तो माँसे रहा ही नहीं प्रेम ही प्रभुका स्वरूप है-जायगा। जब माँकी यह बात है तब सारी माताओंका प्रेम हरीको रूप है, वे हरि प्रेमस्वरूप। एकत्र केन्द्रीभूत स्नेह जिस भगवान्के स्नेहसागरकी एक एकहि ह्वै द्वैमें लसै, ज्यों सूरज अरु धूप॥ बूँद भी नहीं है, वह भगवान्रूपी माँ दुखी जीव-प्रभु-प्रेम सर्वथा अनन्य और अव्यभिचारी हुआ संतानकी कातर पुकार सुनकर कैसे रह सकेगी? जीव करता है। उस प्रेमका भाग दूसरे किसीको किंचित् भी एक तो उसे अपने पास मौजूद मानता ही नहीं, दूसरे नहीं मिलता। उसकी पुकार बनावटी और लोग-दिखाऊ होती है। यदि मैं अपने सम्बन्धमें कुछ भी नहीं लिखना चाहता। इतना ही लिखता हूँ कि मैं अपने ऊपर भगवान्की बड़ी जीव यह माने कि भगवान् यहाँ मौजूद हैं (जो वे वास्तवमें हैं ही; क्योंकि वे सर्वव्यापी हैं) और वे बडे कृपा समझता हूँ और पद-पदपर उस परम कृपाका दयालु हैं तथा यों मानकर उन्हें कातर स्वरसे पुकारे तो अनुभव करता हूँ।

भाग ९१ \*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\* (२) इस कलिकालमें भगवान्का साक्षात्कार समझकर तीव्र इच्छा और प्राणोंकी व्याकुलतासे जिस किसीने उनको पुकारा है, उसीने उनकी दिव्य झाँकीका अवश्य हो सकता है। भगवान् नित्य हैं तो उनका साक्षात्कार भी सर्वकालमें नित्य है। भगवान्के साक्षात्कारका दर्शन प्राप्त किया है। इसमें तिनक भी सन्देह नहीं है। भगवान्के शृंगारकी-जैसी आप ठीक समझें, वैसी ही पहला उपाय तो साक्षात्कारकी अति तीव्र और एकमात्र इच्छाका होना है। भगवान्की माधुरी मूरतिके दर्शनके भावना करें। दर्शन होनेपर असलीका पता आपको ही लग सकता है। नामका जप—जो नाम आपको प्रिय लिये प्राणोंमें व्याकुलता, मनमें वेदना और अन्य सारी अभिलाषाओंका त्याग हो जाना चाहिये, परंतु यह बात लगे, उसीका जप करें, परंतु श्रीकृष्णभगवान्के उपासकके सदा याद रखनी चाहिये कि अपने पुरुषार्थके बलसे लिये 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' या 'श्रीराम कृष्ण हरि' अथवा 'श्रीकृष्ण: शरणं मम' ये मन्त्र भगवान्के दर्शन नहीं हो सकते। उस वस्तुकी कोई कीमत नहीं है, जिसके बदलेमें वह मिल जाय। बहुत उपादेय हैं। भगवानुको जल्दी आकर्षण करनेका उपाय तो प्रेम है—अनन्य प्रेम है। सारी इन्द्रियाँ उन्हीकी व्याकुलता, वेदना और अन्य सारी आकांक्षाओंका त्याग कोई साधन नहीं है। ये तो प्रभु-विरहीके लक्षण हैं। सेवामें लग जानी चाहिये, आरम्भमें नियमपूर्वक नाम-भगवद्दर्शन तो उन्हींकी कृपासे होते हैं। आप जिस जप, सदा नाम जपते हुए ही कार्य करनेका अभ्यास, नियमित ध्यान करनेकी चेष्टा, ध्यानकी चेष्टा रखते हुए स्वरूपके दर्शन चाहते हैं, उसीके दर्शन हो सकते हैं। परंतु इसमें किसी मनुष्यकी सहायता क्या काम दे सकती ही कार्य करनेका अभ्यास, असत्य, दम्भ और अभिमानका है। आपका और आपके प्रभुका बड़ा ही निकटका त्याग, दीनता, नम्रता, प्रेम, मैत्री आदिका ग्रहण करना— सम्बन्ध है; वे आपमें हैं और आप उनमें हैं, वे आपके ये ही उपाय हैं। हैं और आप उनके हैं। इस सीधे सम्बन्धको पहचानकर, भगवान्की कृपाका भरोसा रखना—'उनकी कृपासे पहचाननेमें न आये तो विश्वास करके ही उन्हें सच्चे मेरा अवश्य उद्धार होगा, भगवान् मुझे जरूर दर्शन देकर हृदयसे पुकारिये। आपकी व्याकुल पुकारसे बड़ा काम कृतार्थ करेंगे' ऐसा निश्चय रखना; 'भगवान् सदा मेरे हो सकता है। भगवान् सब स्थानोंमें सब कालमें साथ हैं, मैं उनके शरणागत हूँ, उनका वरद हाथ मेरे पूर्णरूपसे विराजमान हैं। पुकार सुनते ही उत्तर देते हैं। मस्तकपर है, मेरे कृतकार्य होनेमें कोई सन्देह नहीं, पाप मेरे पास नहीं आ सकते।' इस प्रकारकी दृढ़ भावना बच्चा छटपटाता हो और माँ बाहर बैठी हो तो क्या वह बच्चेकी पुकार सुनकर कभी उसके पास आये बिना रह करना बहुत लाभकारी है। शेष प्रभुकृपा। सकती है? पुकार बनावटी हो या माँ न हो तो दूसरी (3) ग्रहोंकी शान्तिके उपाय बात है। यहाँ न होनेका तो सवाल ही नहीं है; क्योंकि भगवान् तो सर्वत्र सर्वकालमें हैं ही। अब आवश्यकता प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र मिला। केवल सच्ची पुकारकी है। भगवान् यहाँपर हैं, मेरे वस्तुत: ग्रहोंकी शान्तिके लिये शास्त्रोंमें जो जप, पूजा एकमात्र प्रेमास्पद हैं। इस विश्वास और निश्चयपर और अनुष्ठानादि बतलाये गये हैं, उन्हींको विधिपूर्वक दृढ़तासे आरूढ़ होकर जो भगवानुको पुकारा जाता है, करना चाहिये। किंतु सब ग्रहोंकी शान्तिके लिये सबसे वही सच्ची पुकार है। दो बातें होनी चाहिये-एक बढ़कर उपाय तो भगवान्का निष्कामभावसे प्रेमपूर्वक भजन

करना ही है। यही सत्य और अटल उपाय है। इससे सब

ग्रहोंकी शान्ति अपने-आप हो जाती है। शेष प्रभुकृपा।

भगवान्के यहाँ होनेमें दृढ़ विश्वास और दूसरी उन्हींको

एकमात्र अपना परम प्रेमपात्र समझना। बस, ऐसा

व्रतोत्सव-पर्व

# व्रतोत्सव-पर्व

संख्या ५ ]

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, ग्रीष्म-ऋतु, आषाढ़ कृष्णपक्ष तिथि नक्षत्र दिनांक

प्रतिपदा रात्रिमें ७। ३८ बजेतक |शनि |मूल अहोरात्र १० जून द्वितीया 🦙 ९ । २६ बजेतक रवि ११ ,,

मूल दिनमें ७।१८ बजेतक पू० षा० ''९। २४ बजेतक

तृतीया "१०।५४ बजेतक सोम

बुध

षष्ठी 🛷१२।३३ बजेतक गुरु धनिष्ठा 😗 १।५५ बजेतक

सप्तमी ᢊ १२।५ बजेतक शुक्र

शतभिषा 🕶 २।२२ बजेतक १६ 🕠 शनि पु० भा '' २। २१ बजेतक

अष्टमी <table-cell-rows> ११। ८ बजेतक रवि

उ० भा० '' १।५३ बजेतक १८ "

नवमी 🦙 ९।४६ बजेतक दशमी "८।३ बजेतक रेवती 😗 १।५ बजेतक सोम |

१९ ,,

एकादशी सायं ६।० बजेतक | मंगल | अश्विनी 🗤 ११।५५ बजेतक |२० 🕠 भरणी '' १०।३० बजेतक २१ '' बुध

द्वादशी दिनमें ३।४५ बजेतक कृत्तिका 🕶 ८।५६ बजेतक गुरु २२ ,,

त्रयोदशी 🤈 १।२० बजेतक रोहिणी 😗 ७। १७ बजेतक शुक्र शनि मृगशिरा प्रातः ५। ३७ बजेतक २४ 🕠

चतुर्दशी 🕠 १०।५२ बजेतक अमावस्या <table-cell-rows> ८ । २४ बजेतक

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, ग्रीष्म-ऋतु, आषाढ़ शुक्लपक्ष तिथि वार नक्षत्र

प्रतिपदा प्रातः ६। १ बजेतक रिव

दिनांक पुनर्वसु रात्रिमें २। ३६ बजेतक २५ जून तृतीयारात्रिमें १। ४९ बजेतक सोम पुष्य 🗤 १। २५ बजेतक

आश्लेषा 🗤 १२। ३५ बजेतक

चतुर्थी 😗 १२। ९ बजेतक 🗗 मंगल

पंचमी '' १०।५३ बजेतक बुध 📗 मघा 🗤 १२।४ बजेतक पू० फा० ११ १२। ० बजेतक उ० फा० '' १२। २५ बजेतक

षष्ठी 😗 १०।२ बजेतक 🕂 गुरु शुक्र हस्त 🗤 १। २० बजेतक

सप्तमी 🗤 ९ । ३९ बजेतक अष्टमी 🗤 ९। ४७ बजेतक शिनि नवमी १११०।३० बजेतक रिव चित्रा '' २। ४६ बजेतक

दशमी 😗 ११। ३८ बजेतक सोम

स्वाती रात्रिशेष ४।३९ बजेतक एकादशी ''१।१२ बजेतक मिंगल विशाखा अहोरात्र

पूर्णिमादिनमें ८। ५१ बजेतक रिव

द्वादशी 😗 ३।२ बजेतक बुध त्रयोदशी रात्रिशेष ५।२ बजेतक गुरु

विशाखा प्रात: ६।५५ बजेतक अनुराधा दिनमें ९।२५ बजेतक चतुर्दशी अहोरात्र शुक्र ज्येष्ठा '' १२।२ बजेतक चतुर्दशी प्रात: ७।२ बजेतक शनि 🗤 २। ३६ बजेतक

मूल

पु० षा० सायं ४।५७ बजेतक

भद्रा दिनमें १०।९ बजेसे रात्रिमें १०।५४ बजेतक, मकरराशि दिनमें १२ ,, ४।२ बजेसे। चतुर्थी 🛷 ११।५५ बजेतक मंगल उ० षा० ११ ११ । २८ बजेतक १३ 🕠 पंचमी 🕖 १२। ३० बजेतक श्रवण १११२।५७ बजेतक १४ 🕠

२६ ग

२७ "

२८ "

२९ "

₹0 11

२ "

३ "

8 "

4 "

દ્ 🗤

9 11

6 11

9 "

१ जुलाई

संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।४४ बजे।

कुंभराशि रात्रिमें १। २६ बजे, पंचकारम्भ रात्रिमें १। २६ बजे। भद्रा रात्रिमें १२।३३ बजेसे, मिथुन-संक्रान्ति दिनमें १२।१ बजे। भद्रा दिनमें १२।१९ बजेतक। **मीनराशि** दिनमें ८। २१ बजेसे।

**मूल** दिनमें ७। १८ बजेतक।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

मूल दिनमें १।५३ बजेसे। भद्रा दिनमें ८।५४ बजेसे रात्रिमें ८।३ बजेतक, मेषराशि दिनमें १।५

बजेसे, **पंचक** समाप्त दिनमें १।५ बजे।

मूल दिनमें ११।५५ बजेतक, योगिनी एकादशीव्रत (सबका)।

वृषराशि दिनमें ४। ६ बजेसे, प्रदोषव्रत, सायन कर्कका सूर्य दिनमें ४।४१ बजे, आर्द्राका सूर्य दिनमें १२।३३ बजे। भद्रा दिनमें १।२० बजेसे रात्रिमें १२।६ बजेतक।

मिथुनराशि सायं ६।२७ बजेसे, श्राद्धकी अमावस्या।

अमावस्या।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

कर्कराशि रात्रिमें ९। ३ बजेसे, अनुदया श्रीजगदीश रथयात्रा। मूल रात्रिमें १। २५ बजेसे। भद्रा दिनमें १२। ५९ बजेसे रात्रिमें १२। ९ बजेतक, सिंहराशि

रात्रिमें १२। ३५ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत। मूल रात्रिमें १२। ४ बजेतक।

श्रीस्कन्दषष्ठीव्रत। भद्रा रात्रिमें ९। ३९ बजेसे, कन्याराशि प्रातः ६। ६ बजेसे। भद्रा दिनमें ९। ४४ बजेतक।

चातुर्मास्यव्रत प्रारम्भ।

धनुराशि दिनमें १२। २ बजेसे

७। ५६ बजेतक, व्रत-पूर्णिमा।

मकरराशि रात्रिमें ११। २७ बजेसे, गुरुपूर्णिमा।

तुलाराशि दिनमें २। ३ बजेसे

रात्रिमें १२। २० बजेसे, श्रीहरिशयनी एकादशीव्रत।

मूल दिनमें २। ३६ बजेतक, भद्रा दिनमें ७। २ बजेसे रात्रिमें

भद्रा दिनमें १२। २४ बजेसे रात्रिमें १। १२ बजेतक, वृश्चिकराशि प्रदोषव्रत, पुनर्वसुका सूर्य दिनमें २।८ बजे, मूल दिनमें ९।२५ बजेसे।

कृपानुभूति रिजर्वेशन था। हम दिल्लीसे करीब ११ बजे रवाना होकर (8)

श्रीहनुमानुजी महाराजकी कृपा मेरी छ: वर्षीय नातिन जो कि कक्षा-१ में पढती है,

वह हमेशा श्रीहनुमान्जी महाराजकी पूजा मेरे साथ करती

है तथा उसको कई श्लोक भी याद हैं। शामको वह आरतीमें

अक्सर मेरे साथ रहती है। दिनांक २१ अप्रैल २०१६ ई०

को सायं ४ बजेकी घटना है, उसका छोटा भाई जो लगभग

ढाई सालका है, खेलते वक्त उसकी नाकके अन्दर एक लाल रंगका मोती चला गया। मैं स्वयं भी पेशेसे चिकित्सक

हूँ। मैंने मोती निकालनेका काफी प्रयास किया, परंतु वह नहीं निकला। थोडी देरमें हमलोग उसे लेकर मेडिकल

कॉलेज अस्पताल गये, वहाँपर नाक-कान-गले विभागके डॉ॰ अग्रवाल, जो कि अपने निवासमें सो रहे थे, उन्हें उठाया और तत्काल समस्यासे अवगत कराया। इस बीच

मेरी पत्नी उस बालकको गोदमें लेकर गाडीमें ही बैठी रही। जैसे ही डॉ॰ अग्रवालने ऑपरेशन टेबलमें पूरी तैयारी करके उसे अन्दर लानेको कहा, इतनेमें स्वत: ही उसके

नाकसे वह लाल रंगका मोती निकल गया, जबिक वह बालक उस समय सो रहा था। तत्काल ही मैंने उन्हें बताया कि मोती तो अपने आप ही निकल गया। तत्पश्चात् उनका शुक्रिया अदा करके हम लोग बच्चेको लेकर घर

आ गये। जब हमलोग अस्पतालमें थे, उस वक्त घरमें अकेले मेरी नातिन ही थी। हमलोगोंके जानेके बाद उसने अपने मनसे घरमें प्रतिष्ठित श्रीहनुमान्जी महाराजकी मूर्ति जहाँपर हमलोग रोज पूजा करते हैं, वहाँपर उसने अगरबत्ती

*होय हमारो* 'का बार-बार पाठ करने लगी। अस्पतालसे आनेपर उसने यह बात हमलोगोंको बतायी। हमारा स्वयंका विश्वास है कि बच्चेके आग्रहको श्रीहनुमान्जी महाराज टाल नहीं सके और एक गम्भीर घटनासे ऐसे बचा लिया,

जलायी और '**बेगि हरो हनुमान महाप्रभु जो कछु संकट** 

(२) रामललाकी कृपा

जैसे कुछ हुआ ही न हो।—डाॅ० हरिकुष्ण पाण्डेय

यह घटना सितम्बर २०१५ ई० की है। मैं रक्षाबन्धनके अवसरपर सपत्नीक अपने सालेके पास भिवाडी गया हुआ

दूसरे दिन सुबह बनारस पहुँचे। वहाँ काशी विश्वनाथके दर्शन करके प्रयाग पहुँचे। वहाँ संगममें स्नान करके अगले दिन बसद्वारा ९ सितम्बरको सायं अयोध्या पहुँच गये। सबेरे

सरयूमें स्नान किया, तत्पश्चात् हनुमानगढ़ी तथा अन्य दर्शनीय स्थानोंमें दर्शन करते हुए अन्तमें राम-जन्मस्थली गये। रामललाका मन्दिर छावनी बना हुआ था। जगह-

जगह दर्शनार्थियोंकी चेकिंग की जा रही थी। स्त्री-पुरुषकी अलग-अलग चेकिंगकी व्यवस्था थी। पहली चौकीपर चेकिंगके पश्चात् हम आगे बढ़े। दूसरी चौकीपर पहुँचनेपर मेरी पत्नीको तो आगे जानेकी अनुमति मिल गयी, किंत्

मुझे वहींपर रोक लिया गया और कहा कि पैन्ट ऊपर करिये, आपने पैन्टमें क्या छिपा रखा है ? मैंने पैन्टको घुटनेसे ऊपर करते हुए दिखाया कि मैंने कुछ नहीं छिपाया है। तब गार्डने कहा कि मशीन बता रही है कि कोई वस्त् छिपी हुई है। तब एकाएक मुझे स्मरण हो आया और मैंने

आप अन्दर नहीं जा सकते। आप वापस पीछे चौकीपर जाकर अनुमति लेकर आयें। मैं पत्नीको वहीं ठहरनेके लिये कहकर वापस चौकीपर आया और वहाँ बैठे अधिकारीको सारी बात बताकर उनसे रामललाके दर्शनहेतु अनुमति प्रदान करनेका निवेदन किया। पर काफी अनुनय-विनय करनेके पश्चात् भी मुझे अनुमति नहीं मिली और मैं हताश होकर पत्नीको वापस लाने चला गया। मैंने पत्नीसे

कहा, 'मुझे अन्दर जानेकी अनुमति नहीं मिली। तुम अन्दर

जाकर रामललाके दर्शन कर आओ।' पत्नीने कहा—मैं

निवेदन किया कि मेरे बायें पैरमें फ्रैक्चर हो गया था और

पैरके अन्दर हड्डीमें स्टीलकी राड पड़ी है। उसने कहा

अकेली नहीं जाऊँगी! हम दोनोंने भगवान्से प्रार्थना की कि हे भगवान्! आपके द्वारपर आकर हम बिना दर्शन किये जा रहे हैं। यह कहकर हम दोनों वापस आनेको रवाना ही हुए थे कि भगवान्ने हमारी प्रार्थना सुन ली और गार्डके पास

लिये कहा गया था। घट-घटवासी प्रभुने हमारी प्रार्थना सुन ली थी। इस प्रकार रामललाकी कृपासे हमें उनके था Highertuis rिस्मिखंड Qicc Sérve ो विस्कृतिः सेंसेड ए एक्वा विस्कृतिः सेंसेड ए एक्वा विस्कृति हो Mila De श्रिप्सितासिंह Look By Avinash/Sha

वायरलेस आया, जिसमें मुझे अन्दर जानेकी अनुमतिके

पढो, समझो और करो संख्या ५ ] पढ़ो, समझो और करो ताँगेवालेकी आदर्श ईमानदारी और सेवाभाव घटना पुरानी है, मध्यप्रदेशके एक प्रतिष्ठित व्यापारी कि अर्धमृतक-सी अवस्थामें था, पकड़े और एक हाथसे पचास हजार रुपये लेकर दक्षिणमें (मैसूर, मदुरा और घोड़ेकी रास थामे घोड़ेको हाँक रहा था। चार-पाँच मील चलनेके बाद व्यापारीको कुछ होश–सा आया और मद्रास) माल खरीदनेके लिये जा रहे थे। इस प्रान्तमें शतरंजी और साड़ियाँ एवं मैसूरमें चन्दनकी लकड़ीकी उसने लड़खड़ाती जबानसे पूछा, 'कौन?' 'मैं हूँ कलामय वस्तुएँ अच्छी और सुन्दर बनती हैं। व्यापारीने ताँगेवाला। मैंने आपको कृष्णराजसागरके पुलके जीनेसे एक-एक हजारके ५० नोट बनयानके दोनों जेबोंमें रख गिरते हुए देखा था। आपके साथ कोई था नहीं और लिये और जेबोंको खूब सी लिया था। सबसे पहले यह आप बेहोशीकी हालतमें थे। मेरे मनमें आया कि मैं एक घायल व्यक्तिकी सेवा करूँ और आपको अपने घर भेज व्यापारी मैसूर उतरकर यहाँसे १४ मील दूर कृष्णराजसागरका दूँ। हूँ तो ताँगेवाला, पर ईमानदार हूँ और ईमानदारीके बाँध और इलेक्ट्रिक प्रदर्शन देखने गया। लिये ही जीता हूँ।' व्यापारीने कोटकी जेबमेंसे एक सौ यह प्रदर्शनीय स्थल शामको ४ बजेसे रातके १० बजेतक मैसूर-सरकारकी ओरसे आम जनताके लिये रुपयेका नोट निकालकर ताँगेवालेको देते हुए कहा 'लो खुला रहता है। व्यापारीने कृष्णराज-सागरका बाँध एवं तुम्हारे लिये इनाम।' अद्भुत विद्युत्-प्रकाश, जो कि फव्वारों और क्यारियोंमें ताँगेवालेने व्यापारीसे कहा—'सेवाका मूल्य सोने-अपनी अनोखी छटा दिखाकर दर्शकोंको मोहित कर चाँदीके टुकड़ोंसे नहीं आँका जा सकता। मैं आपको लेता है, देखा। देखकर वह पुलकी सीढ़ियोंपर चढ़ रहा इसलिये नहीं लाया कि आप मुझे इनाम दें और न मुझे था कि उसे अचानक चक्कर आया और वह पुलकी इस प्रकारका लोभ-लालच ही है, मेरा पेशा ऐसा है कि सीढ़ियोंपर लुढ़कता हुआ नीचे चला आया। सभ्य-समाज इस पेशेको हलका पेशा कहता है और व्यापारी सुदृढ़ शरीरवाला और शारीरिक शक्ति-हमारे समाजको बेईमान, धोखेबाज, चालबाज बतलाता है। पर ऐसी बात नहीं है। मैं तो भगवानुको चारों ओर सम्पन्न था। अतः वह हाथ-पैरों एवं मस्तकका रक्त पोंछकर फिर पुलकी सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। अन्तिम देखकर जीता हूँ। मुझे डर लगता है कि यदि मैं बेईमान सीढीपर ज्यों ही पैर रखा कि उसे फिर जबर्दस्त चक्कर हो गया तो भगवान्के न्यायालयमें क्या उत्तर दूँगा। मैं ऐसा मानता हूँ कि इस प्रकार मेरा डरना मेरे लिये आया और दूसरी बार पुनः सीढ़ियोंपर लुढ़कने लगा। पुलके पास ही ताँगा-स्टैंड था। कई ताँगेवाले खड़े थे, ईमानदार बननेके सम्बन्धमें रामबाण सिद्ध हुआ है।' जिनमेंसे एक ताँगेवालेने इस व्यापारीको पुलकी सीढ़ियोंसे ताँगेवालेका लंबा भाषण सुनकर व्यापारीने कोटकी लुढ़कते देख लिया। उसने चाबुक ताँगेमें रखा और दूसरी जेबमेंसे सौ-सौके पाँच नोट निकाल ताँगेवालेके हाथपर रख दिये। ताँगेवाला अबकी बार झल्ला उठा पुलपर आया। तबतक आहत व्यापारी लुढ़कता हुआ सबसे नीचेकी सीढ़ीपर आकर लहूलुहान हालतमें पड़ा और उसने कहा, 'माफ कीजिये, मुझे एक भी पाई था। बेहोशी भी आ गयी थी। आपसे लेना हराम है!' और उसने सौ-सौके पाँच नोट ताँगेवालेने उस रक्तरंजित व्यापारीको, जिसके वस्त्र व्यापारीको लौटा दिये, किंतु नोट व्यापारीके हाथमें न रक्तमें सने थे, गोदीमें उठाया और जैसे-तैसे सीढ़ियाँ जाकर ताँगेमें ही गिर गये। ताँगेवालेने मुड़कर देखा तो चढ़कर ताँगेमें सुला दिया। एक हाथसे व्यापारीको, जो व्यापारी बेहोश हो गया था और उसके मुँहसे सफेद

भाग ९१ \* ताँगेवालेकी ईमानदारीसे डी॰एस॰पी॰ को विशेष हर्ष झाग निकल रहे थे। हुआ कि एक ताँगेवाला, जिसे लोग बेईमान समझते हैं, इस दृश्यको देखकर ताँगेवालेके मुँहपर हवाइयाँ उड़ने लगीं। हे प्रभो! क्या यह व्यक्ति अपने घर कितना ईमानदार हो सकता है। फिर डी०एस०पी० ने कर्नाटक रेस्टोराँके मैनेजरको फोन किया कि रोजनामचा पहुँचनेके पहले ही विदा ले लेगा और मेरी सेवा अधूरी रहेगी ? यह व्यक्ति तो श्रीमान् मालूम पड़ता है, अन्यथा (जिसमें बाहरसे आनेवाले मुसाफिरोंका नाम,धाम एवं दो-चार रुपयेकी मजदूरीके लिये ५०० रुपये न देता। पता होता है) लेकर शीघ्र आओ। इतनेमें सिविल सर्जन लगता है यह व्यक्ति मैसूर या मैसूर-प्रान्तका नहीं है; मय स्टाफ (नर्सरी एवं सर्जरी)-के आ गये, उन्होंने यह हिन्दी बोलता है, उत्तरप्रदेश या मध्यप्रदेशका होना बीमारकी श्रमपूर्वक अच्छी तरह जाँच की। चाहिये। तब क्या यह व्यापारी है? तब तो इसके पास जाँचकर सिविल सर्जनने बताया कि यह मरीज हजारों रुपये होंगे। मैसूर यहाँसे ८ मील दूर है और अधिक-से-अधिक एक घण्टेका मेहमान है। सतत वहाँतक पहुँचनेके लिये कम-से-कम एक घण्टा लगेगा। रक्तप्रवाहके कारण अब इसका बचना असम्भव है। पाँच नोट जो कि ताँगेमें ही गिर गये थे, उन्हें डाक्टरने अथक प्रयत्न करके आहत नवयुवक व्यापारीको उठाकर उसने व्यापारीके कोटके जेबमें रख दिया। पर सचेत किया। वह होशमें आ गया। उसने पासमें ही कोटके नीचे कुछ उठा हुआ-सा भाग दीख रहा था; ताँगेवालेको बैठा देखा और धीमे स्वरमें कहा—'में ताँगेवालेने टटोलकर देखा तो बनयानके दोनों जेब कृष्णराजसागर-पुलकी सीढ़ियाँ चढ़ रहा था कि एकाएक चक्कर आया और मैं जमींदोज हो गया। जैसे-तैसे लबालब भरे थे। उसे संतोष हुआ कि दोनों जेब सिले हुए थे। ठीक १० बजे ताँगेवाला मैसूर पहुँचा और साहस करके दुबारा सीढ़ियाँ चढ़ने लगा कि मुझे फिर पुलिस-स्टेशन जाकर ताँगा रोका और रिपोर्ट की। चक्कर आ गया। इसके बाद क्या हुआ, यह मुझे पता नहीं। होश आनेपर मैंने अपने आपको पाया कि मैं ताँगेमें समयको बात, उस समय डी॰एस॰पी॰ वहीं थे। वे अन्य चार पुलिस जवानोंके साथ ताँगेके पास आये। जा रहा हूँ। विचार आया कि ताँगेवालेने हमदर्दीके नाते देखा तो एक सुन्दर सुडौल गौरवर्ण नवयुवक मुँहसे झाग मुझपर दया की और मैसूर ले जा रहा है। डाल रहा है। कभी-कभी एक सेकेण्डके लिये आँखें 'मैं ताँगेवालेकी हमदर्दीसे बहुत प्रभावित हुआ खुल जाती हैं। डी॰एस॰पी॰ ने सबसे पहले सिविल और उसे सौ रुपये इनाममें दिये, पर उसने नहीं लिये। सर्जनको फोन करके बुलाया। इसके बाद पुलिसके फिर पाँच सौ रुपये इनाममें दिये। इनाम देनेके बाद ही जवानोंके साथ नवयुवककी तलाशी ली। कोटके जेबमें मुझे बेहोशी आ गयी। होश आनेपर मैं आपलोगोंको अपने सामने देखता हूँ। मुझे यह पता नहीं कि ताँगेवालेने सौ-सौके ७ नोट, माल खरीदनेकी सूची, डायरी और कर्नाटक रेस्टोरॉॅंकी एक स्लिप मिली। कमीजकी जेब वे पाँच सौ रुपये लिये या नहीं; मुझे ईमानदार, नेक एवं खाली मिली। बनियानके जेब खोलकर देखे गये तो सेवाभावी व्यक्ति मालूम होता है।' इतनेमें कर्नाटक रेस्टोरॉॅंके मैनेजर आ गये। उन्होंने वह रोजनामचा पचास हजारके नोट मिले। अब डी॰एस॰पी॰ को यह समझते देर न लगी कि दिखलाया, जिसमें निम्न प्रकार लिखा हुआ था—दिनांक यह मध्यप्रदेशका एक प्रतिष्ठित व्यापारी है, दक्षिण-२२ दिसम्बर १९५४ श्रीमहेशचन्द्र कौल, फर्मका नाम प्रान्तमें माल खरीदने आया है। ताँगेवालेके बयान लिये। महेशचन्द्र गिरिजाशंकर, निवासी मालपुरा, जिला बस्तर, उसने ईमानदारीके साथ सभी घटनाएँ स्पष्ट रख दीं। मध्यप्रदेश। रोजनामचेपर तीन दिनोंतक रेस्टोरॉॅंमें ठहरनेकी

मनन करने योग्य अहंकार-नाश कार्य चल रहा है, इच्छा हुई कि मैं भी जाकर देखूँ। किसी राष्ट्रकार्य-धुरन्धर अथवा साधारणसे व्यक्तिमें समस्त दुर्गुणोंका अग्रणी अहंकार या अभिमान जब इसीसे चला आया। वाह! वाह! शिवबा! इस स्थानका प्रवेश पा जाता है, तब उसके कार्योंमें होनेवाली भाग्योदय और इतने जीवोंका पालन तुम्हारे ही कारण हो रहा है।' सद्गुरुके श्रीमुखसे यह सुनकर श्रीशिवाजी उन्नतिकी बात तो दूर रही, किये हुए कार्योंपर भी पानी फिरनेमें विलम्ब नहीं लगता। पर यदि उसे यथासमय महाराजको अपनी धन्यता प्रतीत हुई और उन्होंने सचेत कर दिया गया तो वह यशके शिखरपर पहुँच ही कहा—'यह सब कुछ सद्गुरुके आशीर्वादका फल है।' इस प्रकार बातचीत करते हुए वे किलेसे नीचे, जाता है। इस प्रकारकी अनेक कथाएँ अपने इतिहास-जहाँ मार्ग-निर्माणका कार्य हो रहा था, आ पहुँचे। पुराणादिमें हैं। इस सन्दर्भमें लगभग ३०० वर्ष पूर्वकी

एक सत्कथा इस प्रकार है-हिन्दु-स्वराज्य-संस्थापक श्रीशिवाजी महाराजके सद्गुरु श्रीसमर्थ रामदास स्वामी महाराजका तप:सामर्थ्य और उनका किया हुआ राष्ट्रकार्य अलौकिक है। सद्गुरुके द्वारा निर्दिष्ट मार्गका अनुसरण करके श्रीश्रीभवानी-कुपासे श्रीशिवाजी महाराजने कई किले जीत लिये। उस समय किलोंका बड़ा महत्त्व था। इसलिये जीते हुए किलोंको ठीक करवानेका एवं नये किलोंके निर्माणका

कार्य सदा चलता रहता था और इस कार्यमें हजारों मजदूर सदा लगे रहते थे। सामनगढ़ नामक किलेका निर्माण हो रहा था, एक दिन उसका निरीक्षण करनेके लिये श्रीशिवाजी महाराज वहाँ गये। वहाँ बहुसंख्यक श्रिमिकोंको कार्य करते देखकर उनके मनमें एक ऐसी अहंकार-भरी भावनाका अंकुर उत्पन्न हो आया कि 'मेरे कारण ही इतने जीवोंका उदर-निर्वाह चल रहा है।' इसी विचारमें वे तटपर घूम रहे थे। अन्तर्यामी

मार्गके बने हुए भागमें एक विशाल शिला अभी वैसी ही पड़ी थी। उसे देखकर सद्गुरुने पूछा—'यह शिला यहाँ बीचमें क्यों पड़ी है?' उत्तर मिला—'मार्गका निर्माण हो जानेपर इसे तोड़कर काममें ले लिया जायगा।' श्रीसद्गुरु बोले—'नहीं, नहीं, कामको हाथों-हाथ ही कर डालना चाहिये; अन्यथा जो काम पीछे रह जाता है, वह हो नहीं पाता। अभी कारीगरोंको बुलाओ

गये। सबोंने देखा कि शिलाके अंदर एक भागमें ऊखल-जितना गहरा एक गड्ढा था, जिसमें पर्याप्त जल भरा था और उसमें एक मेंढक बैठा हुआ था। उसे देखकर श्रीसद्गुरु बोले—'वाह, वाह, शिवबा, धन्य हो तुम! इस शिलाके अन्दर भी तुमने जल रखवाकर इस मेंढकके पोषणकी व्यवस्था कर रखी है।' बस, पर्याप्त थे इतने शब्द श्रीशिव-छत्रपतिके सद्गुरु श्रीसमर्थ इस बातको जान गये और 'जय जय लिये। उनके चित्तमें प्रकाश हुआ। उन्हें अपने अहंकारका

और इसके बीचसे दो भाग करा दो।' तुरंत कारीगरोंको बुलाया गया और उस शिलाके समान दो टुकडे कर दिये

रघुबीर समर्थ' की रट लगाते हुए अकस्मात् न जाने पता लग गया और पता लगते ही 'इतने लोगोंके पेट कहाँसे वहाँ आ पहँचे। उन्हें देखते ही श्रीशिवाजी में भरता हूँ-इस अभिमान-तिमिरका तुरंत नाश हो महाराजने आगे बढ़कर दण्डवत् प्रणाम किया और पूछा, गया। उन्होंने तुरंत श्रीसद्गुरुके चरण पकड़ लिये और 'सद्गुरुका शुभागमन कहाँसे हुआ?' हँसकर श्रीसमर्थ अपराधके लिये क्षमा-याचना की। बोले—'शिवबा। मैंने सुना कि यहाँ तुम्हारा बहुत बड़ा Hinduism Discord Server https://dse.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash Sha

	<ul> <li>पिछले कुछ दिनोंसे अ</li> </ul>	नुपल	नब्ध प	पुस्तकें—अब उपलब्ध —			
कोड		मूल्य ₹	कोड		गूल्य ₹		
1593	अन्त्यकर्म-श्राद्धप्रकाश	१३०	1162	एकादशीव्रतका माहात्म्य	२२		
1189	संक्षिप्त गरुड़पुराण	१६०	1627	<b>क्तद्राष्ट्राध्यायी</b>	३०		
1183	संक्षिप्त नारदपुराण	२००	29	<b>श्रीमद्भागवत-महापुराण</b> —मूल, मोटा टाइप	१६०		
1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१२०	557	मत्स्यमहापुराण	२७०		
1897	<b>श्रीमदेवीभागवत</b> —सटीक, प्रथम खण्ड	२००	1728	सार्थ ज्ञानेश्वरी (कन्नड़)	२००		
1898	<b>श्रीमदेवीभागवत</b> —सटीक, द्वितीय खण्ड	२००	800	गीता-तत्त्व-विवेचनी (तिमल)	१८५		
48	<mark>श्रीविष्णुपुराण</mark> —सटीक	१४०	1903	<mark>श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण</mark> —(तमिल)]]	२००		
1980	ज्योतिषतत्त्वाङ <u>्</u> क	१३०	1776	<b>श्रीमद्भागवतसुधासागर</b> (मराठी)	२५०		
40	भक्त-चरिताङ्क	२३०	1533	श्रीरामचरितमानस (सटीक) वि.सं.,गुजराती	300		
श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारके कुछ पत्रोंके संग्रह श्रीजयदयालजी गोयन्दकाके कुछ पत्रोंके संग्रह							
कोड	पुस्तकका नाम	मूल्य ₹	कोड	पुस्तकका नाम मूल	य₹		
353	लोक-परलोक-सुधार—६८ पत्रोंका संग्रह	२०	277	उद्धार कैसे हो? - ५१ पत्रोंका संग्रह	१०		
354	<b>आनन्दका स्वरूप</b> —६५ पत्रोंका संग्रह	२०	278	सच्ची सलाह—८० पत्रोंका संग्रह	१२		
355	महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर—९३ पत्रोंका संग्रह	३०	280	साधनोपयोगी पत्र-७२ पत्रोंका संग्रह	१०		
356	शान्ति कैसे मिले?—९४ पत्रोंका संग्रह	२५	281	शिक्षाप्रद पत्र—७० पत्रोंका संग्रह	१५		
357	दु:ख क्यों होते हैं ?—	२५	282	पारमार्थिक पत्र—९१ पत्रोंका संग्रह	१५		
'ਸੀਰਸੇਸ਼' ਸੀਸ਼ਕਸ਼ਨੀ ਰਿਚੀ ਟਨਾਰੇ ਸਕੰ ਸਟੇਅਰ_ਸਟਾਕ							

### 'गीताप्रेस' गोरखपुरकी निजी दूकानें एवं स्टेशन-स्टाल

निम्नलिखित सभी गीताप्रेस गोरखपुरकी निजी दूकानों एवं स्टेशन-स्टालोंपर 'कल्याण'का शुल्क जमा कराके रसीद प्राप्त की जा सकती है।

```
इन्दौर-
            जी० 5, श्रीवर्धन, 4 आर. एन. टी. मार्ग
ऋषिकेश-
            गीताभवन, पो० स्वर्गाश्रम
            भरतिया टावर्स, बादाम बाडी
कटक-
कानपुर-
            24/55, बिरहाना रोड
कोयम्बट्रर- गीताप्रेस मेंशन, 8/1 एम, रेसकोर्स
कोलकाता- गोबिन्दभवन; 151, महात्मा गाँधी रोड
गोरखपुर-
            गीताप्रेस—पो० गीताप्रेस
            इलेक्ट्रो हाउस नं० 23, रामनाथन स्ट्रीट किल पोक
चेन्नई-
            7, भीमसिंह मार्केट, रेलवे स्टेशनके पास
जलगाँव-
दिल्ली-
            2609, नयी सड़क
            श्रीजी कृपा कॉम्प्लेक्स, 851, न्यू इतवारी रोड
नागपुर-
            अशोकराजपथ, महिला अस्पतालके सामने
पटना-
बेंगलोर -
            7/3, सेकेण्ड क्रास, लालबाग रोड
            जी 7, आकार टावर, सी ब्लाक, गान्धीनगर
भीलवाडा-
            282, सामलदास गाँधी मार्ग (प्रिन्सेस स्ट्रीट)
मम्बई-
राँची-
            कार्ट सराय रोड, अपर बाजार, बिड्ला गद्दीके प्रथम तलपर
            मित्तल कॉम्प्लेक्स, गंजपारा, तेलघानी चौक (छत्तीसगढ़)
रायपुर-
            59/9, नीचीबाग
वाराणसी-
            वैभव एपार्टमेन्ट, भटार रोड
सूरत-
            सब्जीमण्डी, मोतीबाजार
हरिद्वार-
```

41, 4-4-1, दिलशाद प्लाजा, सुल्तान बाजार

हैदराबाद-

दिल्ली (प्लेटफार्म नं० 5-6); नयी दिल्ली (नं० 16); हजरत **निजामुद्दीन** [दिल्ली] (नं० 4-5); **कोटा** [राजस्थान] (नं० 1); बीकानेर (नं० 1); गोरखपुर (नं० 1); गोण्डा (नं० 1); कानपुर (नं० 1); झाँसी (नं० 1); लखनऊ [एन॰ ई॰ रेलवे]; वाराणसी (नं॰ ४-५); मुगलसराय (नं॰ 3-4); **हरिद्वार** (नं० 1); **पटना** (मुख्य प्रवेशद्वार); **राँची** (नं० 1); धनबाद (नं० 2-3); मुजफ्फरपुर (नं० 1); समस्तीपुर (नं० 2); छपरा (नं० 1); सीवान (नं० 1); हावड़ा (नं० 5 तथा 18 दोनोंपर); कोलकाता (नं० 1); सियालदा मेन (नं० 8); आसनसोल (नं० 5); कटक (नं० 1); भुवनेश्वर (नं० 1); अहमदाबाद (नं० 2-3); राजकोट (नं० 1); **जामनगर** (नं०1); **भरुच** (नं० 4-5); **वडोदरा** (नं० 4-5); **इन्दौर** (नं० 5); जबलपुर (नं० 6); औरंगाबाद [महाराष्ट्र] (नं० 1); सिकन्दराबाद [आं० प्र०] (नं० 1); विजयवाड़ा (नं० 6); गुवाहाटी (नं० 1); खड़गपुर (नं० 1-2); रायपुर [छत्तीसगढ़] (नं० 1); रायगढ़ (नं० 1); बिलासपुर (नं० 1) बेंगलुरु (नं० 1); यशवन्तपुर (नं० 6); हुबली (नं० 1-2); श्री सत्यसाईं प्रशान्ति निलयम् [दक्षिण-मध्य रेलवे] (नं० 1)।

**फुटकर पुस्तक-दूकानें — चूरू-**ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, पुरानी सड़क, ऋषिकेश-मुनिकी रेती; **बेरहामपुर**- म्युनिसिपल मार्केट काम्प्लेक्स, के० एन० रोड, **नडियाड** (गुजरात) संतराम मन्दिर।

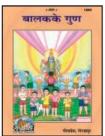


प्र० ति० २०-४-२०१७

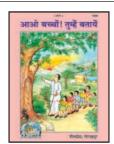
रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2017-2019

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2017-2019

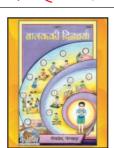
## गीताप्रेससे प्रकाशित बाल-साहित्य ग्रन्थाकार रंगीन चित्रोंके साथ



कोड 1690 ₹३५



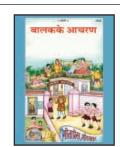
कोड 1689 ₹२५



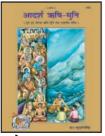
कोड 1692 ₹२५



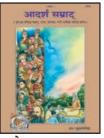
कोड 1693 ₹२५



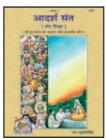
कोड 1694 ₹२५



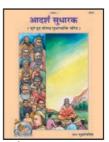
कोड 1986 ₹२५



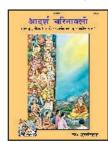
कोड 2022 ₹२५



कोड 2026 ₹२५



कोड 2028 ₹२५



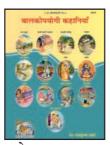
कोड 2004 ₹२५



कोड 2067 ₹२५



कोड 2068 ₹२५



कोड 2070 ₹२५



कोड 2071 ₹२५



कोड 2072 ₹२५

अब उपलब्ध — हिन्दू-संस्कृति-अङ्क (कोड 518) — यह विशेषाङ्क भारतीय संस्कृतिके विभिन्न पक्षों — हिन्दू-धर्म, दर्शन, आचार-विचार, संस्कार, रीति-रिवाज, पर्व, उत्सव, कला-संस्कृति और आदर्शोंपर प्रकाश डालनेवाला तथ्यपूर्ण बृहद् (सचित्र) दिग्दर्शन है। कुछ विद्वानोंने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है तो कुछने इसे 'हिन्दू-संस्कृतिका विश्वकोश' कहा है। भारतीय संस्कृतिके उपासकों, अनुसन्धानकर्ताओं और जिज्ञासुओंके लिये यह अवश्य पठनीय तथा उपयोगी दिशा-निर्देशक है। इस अंकमें परिशिष्टाङ्ककी सामग्री समायोजित कर दी गयी है जिससे यह और भी उपयोगी बन गया है। मृल्य ₹२५०

- 1. कल्याणके पाठकोंकी शिकायतोंके शीघ्र समाधानके लिये कल्याण-कार्यालयमें दो फोन 09235400242/09235400244 उपलब्ध हैं। इन नम्बरोंपर प्रत्येक कार्य-दिवसमें दिनमें 9.30 बजेसे 4.30 बजेतक सम्पर्क कर सकते हैं। अतिरिक्त नं 9648916010 है जिसपर SMS एवं WatsApp की सुविधा भी उपलब्ध है।
- कल्याणके सदस्योंको मासिक अंक निश्चित रूपसे उपलब्ध हो, इसके लिये वार्षिक सदस्यता शुल्क ₹ २२० के अतिरिक्त ₹ २०० देनेपर मासिक अंकोंको भी रिजस्टर्ड डाकसे भेजनेकी व्यवस्था है।

व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो०—गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००<mark>५</mark>